अल्पमोली संस्करण

सूक्ति-रत्नावली

विविध विषयों की प्रेरणादायक सूक्तियों का संग्रह

संकलनकर्त्ता

आनन्दकुमार

पुस्तकालय
सं० 2055
नई दिल्ली
1182

सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन
१९६१

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

पहली बार : १९६१
अल्पमोली संस्करण
मूल्य : डेढ़ रुपया

मुद्रक
हीरा आर्ट प्रेस
दिल्ली

प्रकाशकीय

सूक्ति किसी विस्तृत विचार का निष्कर्षात्मक रूप होता है। उसके पीछे गहन अध्ययन और मनन की शक्ति होती है। इसलिए उसका मन पर अचूक प्रभाव पड़ता है। जीवन में ऐसे अनेक अवसर आते हैं, जब व्यक्ति ऐसे भीषण द्वंद्वों में फंस जाता है कि उसे कोई रास्ता नहीं सूझता। ऐसी स्थिति में ये सूक्तियां उसे समाधान, प्रेरणा और साहस प्रदान करती हैं। अतः किसी भी भाषा के जीवनोपयोगी साहित्य में सूक्तियों और सुभाषितों के संग्रह-ग्रंथों का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

हमने इसी दृष्टि से अबतक 'अमृत की बूंदें' तथा 'सुभाषित-सप्तशती' ये दो संग्रह प्रकाशित किये हैं। 'अमृत की बूंदें' में भारतीय वाङ्मय के विभिन्न ग्रंथों, संत-मनीषियों, चिंतकों और विद्वानों के सुभाषितों के साथ-साथ विदेशी साहित्य में से भी चुनी हुई सूक्तियों को सम्मिलित किया गया है। 'सुभाषित-सप्तशती' में केवल भारतीय वाङ्मय के ग्रंथरत्नों में से ही सुभाषितों को चुनकर दिया गया है।

'सूक्ति-रत्नावली' इस शृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इसमें संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, बंगला, अंग्रेजी, फारसी आदि की विविध-विषयक सरस, सुपाठ्य, सारगर्भित एवं प्रेरणादायक सूक्तियों का संकलन किया गया है। 'अमृत की बूंदें' की तरह इसका प्रकाशन भी अल्पमोली-माला में किया जा रहा है, जिससे सामान्य स्थिति के पाठक भी इसे खरीद सकें।

आशा है, इस तथा मण्डल के अन्य सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार में हमें पाठकों का पूर्ण सहयोग मिलेगा।

—मंत्री

विषय-सूची

१. नमस्कार !	५
२. शुभ कामना	७
३. पूजा, उपासना	६
४. प्रार्थना	२१
५. उद्‌बोधन	२८
६. मनुष्य, मनुष्यता	३४
७. मातृभूमि, देश-प्रेम	३६
८. राष्ट्र, राष्ट्रीयता, राजनीति	४८
६. संकल्प, इच्छा	५६
१०. शिक्षा	६०
११. आसक्ति, अनासक्ति	६५
१२. मैत्री, प्रीति, वियोग	७०
१३. जीवन और मृत्यु	८५
१४. श्रम, उद्योग, आत्मोन्नति	१०४
१५. बल, पौरुष, पराक्रम	१११
१६. अन्न	११७
१७. धन	१२०
१८. हर्ष-विषाद	१२४
१६. शठ-शठता, मूर्ख-मूर्खता	१३६
२०. सामान्य नीति	१४१
२१. प्रश्न और उत्तर	१४६
२२. अन्योक्ति	१५२
२३. व्यंग-विनोद	१५६
२४. लोकोक्ति	१६८

सूक्ति-रत्नावली

: १ :

नमस्कार

१

नम इदुदग्रं नम आ विवासे नमोदाधार पृथिवीमुतद्याम् ।
नमो देवोभ्यो नम ईश एषां कृतं चिदेनो नमसा विवासे ।

—ऋग्वेद

—नमस्कार सबसे बड़ी वस्तु है, इसलिए मैं नमस्कार करता हूं। नमस्कार ही स्वर्ग और पृथ्वी को धारण करता है, इसलिए मैं देवों को नमस्कार करता हूं। देवता लोग नमस्कार के वशीभूत हैं, इसलिए मैं किये हुए पापों का नमस्कार के द्वारा प्रायश्चित्त करता हूं।

२

यस्मिन्सर्वं यतस्सर्वं यत्सर्वं सर्वतश्च यः ।
यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

—श्रीमद्भागवत

— जिसमें यह सब है, जिससे यह सब है, जो यह सब है, जो सब ओर से है, जो सर्व तथा नित्य है, उस सर्वात्मक परमात्मा को नमस्कार है।

३

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्त्तये ।
स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे ॥

—भर्तृहरि

—दिशा और काल जिसके स्वरूप का संकोच नहीं कर सकते, जो अन्त-रहित और चेतन-रूप है तथा जो अपने ही अनुभव से जाना जाता है, उस शान्त एवं ज्योतिर्मय ब्रह्म को नमस्कार है।

४

यो देवोऽग्नौ योऽप्सु यो विश्वभुवनमाविवेश।
यो औषधिषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमोनमः ॥

—जो जल में, अग्नि में, विश्व-भुवन में प्रविष्ट है और जो औषधियों तथा वनस्पतियों में भी व्याप्त है, उस सर्वव्यापक देव को नमस्कार है।

५

नमस्ते सते ते जगत्कारणाय,
नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय।
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय,
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥

—जगत् के कारणरूप और सत्स्वरूप हे प्रभु, तुझे नमस्कार है; समस्त लोकों के आश्रय, हे ज्ञानस्वरूप, तुझे नमस्कार है; मुक्ति देनेवाले हे अद्वैत तत्व, तुझे नमस्कार है; शाश्वत और सर्वव्यापक ब्रह्म को नमस्कार है।

६

यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः
स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै-
र्वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदै-
र्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा
पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा
देवाय तस्मै नमः ॥

—ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र और पवन दिव्य स्तोत्रों से जिसकी स्तुति करते हैं, साम-गान करनेवाले ऋषि-मुनि अंग-पद-क्रम और उपनिषद्-सहित वेदों से जिसकी स्तुति करते हैं, योगीजन ध्यानावस्थित होकर ब्रह्ममय मन-द्वारा जिसका दर्शन करते हैं और सुर तथा असुर जिसकी महिमा का पार नहीं पाते, उस परमात्मा को नमस्कार है।

७

एको गुरुर्नास्ति ततो द्वितीयो।
यो हृद्गतस्तमहं नमामि ॥

—स्कन्द-पुराण

—एक ही गुरु हैं, उनके अतिरिक्त दूसरा कोई गुरु नहीं है। जो हृदय में विराजमान् हैं, वही गुरु हैं, उनको मैं प्रणाम करता हूं।

८

बन्दउं सबहिं राम के नाते। **—तुलसी**

९

एक तेरे सामने ही सिर नवा,
सिर सभीके सामने ऊंचा रहा।

—हरिऔध

: २ :

शुभ कामना

१

आ नो भद्राः क्रतवो, यन्तु विश्वतः। **—ऋग्वेद**

—हमें प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुन्दर विचार प्राप्त हों।

२

अदीनाः स्याम शरदः शतम्।
भूयश्च शरदः शतात् ॥

—यजुर्वेद

—हम सौ वर्ष तक और सौ वर्षों से भी अधिक दिनों तक अदीन होकर—अर्थात् वैभव-सम्पन्न होकर सम्मानपूर्वक जीवित रहें।

३

जीवेम शरदः शतम्। बुध्येम शरदः शतम्।
रोहेम शरदः शतम्। पूषेम शरदः शतम्।

भवेम शरदः शतम् । भूषेम शरदः शतम् ।
भूयसीः शरदः शतात् ।

—अथर्ववेद

—हम सौ वर्ष तक और सौ से भी अधिक काल तक जीवित रहें, अपने ज्ञान को बढ़ाते रहें, उन्नति को प्राप्त हों, उत्तरोत्तर दृढ़ता प्राप्त करें, सुखमय जीवन बिताते रहें और अपनेको सब प्रकार की विभूतियों से विभूषित करते रहें ।

४

उप त्वग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम् ।
नमो भरन्तएमसि ।

—हे अग्ने (ज्ञानाग्नि) ! रात और दिन बुद्धिपूर्वक नमस्कार करते हुए हम तुम्हारे समीप आते रहें ।

५

परस्पर विरोधिन्योरेकसंश्रयदुर्लभम् ।
संगतं श्रीसरस्वत्योर्भूतयेऽस्तु सदा सताम् ॥
सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु ।
सर्वः कामानवाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु ॥

—विक्रमोर्वशीयम् (कालिदास)

—जिस लक्ष्मी और सरस्वती का एक साथ रहना बहुत कठिन कहा जाता है, अबसे वे लोक के कल्याण के लिए एकत्र रहने लगें । सबकी विघ्न-बाधाएं दूर हों, सब फूल-फलें, सबके मनोरथ सिद्ध हों तथा सर्वत्र सभी सुखी एवं प्रसन्न रहें ।

६

शिवमस्तु सर्व जगतां परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः ।
दोषाः प्रयान्तु नाशं सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥

—नागानन्दम् (हर्ष)

—समस्त संसार का भला हो, समस्त प्राणी एक दूसरे का हित करने

में तत्पर रहें, समस्त दोषों का नाश हो और सब जगह लोग सुखी रहें।

७

वृष्टिं हृष्टशिखण्डिताण्डवभृतः
काले किरन्त्वम्बुदाः।
कुर्वन्तः प्रतिरूढ़सन्तत हरित्,
सस्योत्तरीयां क्षितिम्॥
चिन्वानाः सुकृतानि वीतविपदो,
निर्मत्सरैर्मानसै-
र्मोदन्तां घनबद्धबान्धवसुहृद्
गोष्ठी प्रमोदाः प्रजाः॥

—नागानन्दम्

—पृथ्वी को हरे-भरे धान्य-रूपी चादर ओढ़ाने के लिए हर्षित मयूरों के नृत्य से युक्त मेघ समय पर निरन्तर वृष्टि करें। जनता पुण्य कर्म करती हुई विपत्तियों से रहित हो और ईर्ष्यारहित हृदय से बन्धुओं तथा मित्रों की गोष्ठियों में प्रसन्नतापूर्वक आमोद-प्रमोद करें।

: ३ :

पूजा, उपासना

१

एकं ज्योतिर्बहुधा विभाति।

—अथर्ववेद

—एक ही ज्योतिर्मय ब्रह्म अनेक प्रकार से प्रकाशित होता है।

२

सुओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु।

—यजुर्वेद

—वह (ब्रह्म) सब प्रजाओं में ओत-प्रोत—सर्वव्यापक है।

३

हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम् ।
तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यदात्मविदो विदुः ॥

—परम प्रकाश-स्वरूप बुद्धि-कोश में निर्मल ब्रह्म की स्थिति है । वह शुद्ध ब्रह्म ज्योति की भी ज्योति है । आत्मज्ञानी ही उसको जानते हैं ।

४

योगरतो वा भोगरतो वा,
संगरतो वा संगविहीनः ।
यस्य ब्रह्मणि रमते चित्तम्,
नन्दति नन्दति नन्दत्येव ॥

—शंकराचार्य

—योग में रत रहे या भोग में रत रहे, सांसारिक जीवन व्यतीत करे या त्यागी-वैरागी बनकर रहे, जिसका मन सदैव परब्रह्म में लीन हो, वही नित्य परमानन्द पाता है ।

५

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

—ऋग्वेद

—जो जीवनदाता और बलदाता है, देवताओं-सहित सारा विश्व जिसके नियम का पालन करता है, शाश्वत जीवन और मृत्यु दोनों ही जिसकी छाया हैं (उसको छोड़कर) हम किस देवता की पूजा करें ?

६

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा
येनस्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

—ऋग्वेद

—जिसने इस विशाल द्युलोक को, इस पृथ्वी को, स्वर्लोक और नाक-लोक को टिका रक्खा है, जो अन्तरिक्ष में दीप्तिमान् लोक-लोकान्तरों का निर्माण करता है (उसको छोड़कर) हम किस देवता की पूजा करें ?

७

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः ।।

—गीता

—जिससे सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जो समस्त जगत् में व्याप्त है, उसका अपने कर्मों के द्वारा पूजन करने से मनुष्य को सिद्धि प्राप्त होती है।

८

सर्वत्र दैत्याः समतामुपेत्य,
समत्वमाराधनमच्युतस्य ।

—विष्णु-पुराण

प्रह्लाद—हे दैत्यगण ! तुम सर्वत्र समदर्शी बनो। सबको अपने समान जानना ही भगवान् की आराधना है।

९

श्रद्धैव सर्वधर्मस्य चातीव हितकारिणी ।
श्रद्धैव नृणां सिद्धिर्जायते लोकयोर्द्वयोः ।।
श्रद्धया भजतः पुंसः शिलापि फलदायिनी ।
मूर्खोऽपि पूजितो भक्त्या गुरुर्भवति सिद्धिदः ।।

—स्कन्द पुराण

—श्रद्धा ही समस्त धर्मों के लिए अत्यन्त हितकर है। श्रद्धा से ही मनुष्य को दोनों लोकों में सिद्धि प्राप्त होती है। श्रद्धापूर्वक पूजन करने-वाले को पत्थर की मूर्त्ति भी फल देनेवाली होती है। श्रद्धा-भक्ति से पूजने पर अज्ञानी गुरु भी सिद्धिदायक हो जाता है।

१०

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्
यस्मिन् देवा अधिविश्वे निषेदुः ।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति,
य इत्तद्विदुस्त इमे उपासते ।।

—ऋग्वेद

—जिस अविनाशी व्यापक परम तत्त्व में सब जड़-चेतन बसते हैं, उसीका बखान सब वेद-ऋचाएं करती हैं । जिसने उसे नहीं जाना, वह ऋचाएं लेकर क्या करेगा ? जो उसे जानते हैं, वे ही आनन्द से रहते हैं ।

११

मोक्षस्य न हि वासोऽस्ति न ग्रामान्तरमेव वा ।
अज्ञानहृदयग्रन्थिनाशो मोक्ष इति स्मृतः ।।

—शिवगीता

—मोक्ष कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जो कहीं एक स्थान में रक्खी हो । वह कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसको पाने के लिए किसी दूसरी जगह जाना पड़े । वास्तव में, हृदय की अज्ञान-ग्रन्थि के नाश होने को ही मोक्ष कहते हैं ।

१२

अपहाय निजं कर्म कृष्ण कृष्णेतिवादिनः ।
ते हरेर्द्वेषिणः पापाः धर्मार्थं जन्म यद्धरेः ।।

—अपने कर्म को छोड़कर केवल कृष्ण कृष्ण रटनेवाले लोग हरि के वैरी और पापी हैं, क्योंकि स्वयं हरि का जन्म भी तो धर्म की रक्षा के लिए ही होता है ।

१३

उत्तिष्ठ धर्मस्थित शिष्यजुष्टे,
किं पादयोर्मे पतितोऽसि मूर्ध्ना ।

अभ्यर्चनं मे न तथा प्रणामो,
धर्मे यथैषा प्रतिपत्तिरेव ।।

—सौन्दरनन्द

—हे शिष्य-धर्म का पालन करनेवाले ! उठो, मेरे चरणों पर मस्तक टेककर क्यों पड़े हुए हो ? मुझे प्रणाम करना मेरा वैसा सम्मान नहीं है जैसा कि यह धर्माचरण ।

१४

तन का जोगी सब करै मन का बिरला कोय ।
सहजै सब सिधि पाइये जो मन जोगी होय ।।

—कबीर

१५

सुमिरन सुरत लगाइके मुखतें कछू न बोल ।
बाहर के पट देइके अन्तर के पट खोल ।।

—कबीर

१६

माला तो कर में फिरै जीभ फिरै मुख माहिं ।
मनुवां तो दहुं दिसि फिरै यह तो सुमिरन नाहिं ।।

—कबीर

१७

कर का मनका छांड़िके, मन का मनका फेर ।

—कबीर

१८

पाहन पूजे हरि मिलैं तो मैं पूजूं पहार ।

—कबीर

१९

चतुराई हरि ना मिलैं, यह बातों की बात ।

—कबीर

२०

प्रीतम को पतियां लिखूं, जो कहुं होय बिदेस ।
तन में मन में नयन में ताको कहा संदेस ॥

—कबीर

२१

भुक्ति-मुक्ति मांगौं नहीं, भक्ति दान दे मोहिं ।
और कोई याचौं नहीं, निसिदिन याचौं तोहिं ॥

—कबीर

२२

विद्या-मद अरु गुनहुं मद, राजमद्द उनमद्द ।
इतने मद को रद करै, तब पावै अनहद्द ॥

—कबीर

२३

भक्ति-भाव भादों नदी सबै चलीं घहराय ।
सरिता सोइ सराहिये, जो जेठ-मास ठहराय ॥

—कबीर

२४

ज्यों-ज्यों पीवै राम-रस त्यों-त्यों बढ़ै पियास ।
ऐसा कोई एक है बिरला दादू दास ॥

—दादू

२५

राम-नाम मनि-दीप धरु, जीह-देहरी-द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरो, जो चाहसि उजियार ॥

—तुलसी

२६

सबै कहावत राम के, सबहिं राम की आस ।
राम कहैं जेहि आपनो, तेहि भजु तुलसीदास ॥

२७

ना वह रीझै जप-तप कीन्हे,
ना आतम को जारे।
ना वह रीझै धोती टांगे,
ना काया के पखारे ।।
दया करै धरम मन राखै,
घर में रहै उदासी।
अपना-सा दुःख सबका जानै,
ताहि मिलें अबिनासी ।।

—मलूकदास

२८

राम-नाम-रस पीजै मनुआं,
राम-नाम-रस पीजै।
तज कुसंग सतसंग बैठ नित,
हरि-चरचा सुनि लीजै ।।
काम क्रोध मद लोभ मोह कूं,
बहा चित्त सों दीजै।
'मीरा' के प्रभु गिरिधर नागर,
ताहि के रंग में भीजै ।।

२९

ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर,
राम सरिस कोउ नाहीं ।।
जो गति जोग बिराग जतन करि,
नहिं पावत मुनि ज्ञानी।
सो गति देत गीध सबरी कहं,
प्रभु न बहुत जिय जानी ।।

जो संपति दससीस अरपि करि,
रावन सिव पहं लीन्हीं।
सो सम्पदा बिभीषन कहं अति,
सकुच-सहित हरि दीन्हीं ।।
'तुलसिदास' सब भांति सकल सुख,
जो चाहसि मन मेरो।
तौ भजु राम, काम सब पूरन,
करहु कृपानिधि तेरो ।।

३०

मन पछितैं है अवसर बीते ।
दुरलभ देह पाइ हरिपद भजु,
करम बचन अरु ही ते ।।

—तुलसी

३१

सुने रे, मैंने निरबल के बल राम।
पिछली साख भरूं सन्तन की, अड़े संवारे काम ।।
जब लगि गज-बल अपनो बरत्यो, नैक सर्‌यो नहिं काम ।
निरबल ह्वै बल राम पुकार्‌यो, आये आधे नाम ।।
द्रुपद-सुता निरबल भइ ता दिन, तजि आये निज धाम।
दुस्सासन की भुजा थकित भई, बसन रूप भये स्याम ।।
अप-बल, तप-बल और बाहु-बल, चौथो है बल दाम।
'सूर' किसोर कृपा तें सब बल, हारे को हरि-नाम ।।

—सूरदास

३२

निशिबासर बस्तु बिचार करै,
मुख सांचु हिये करुणा धनु है।
अघनिग्रह संग्रह धर्मकथानि,

परिग्रह साधुनि को गनु है ॥
कहि केशव भीतर योग जगै,
अति बाहिर भोगन सों तनु है।
मन हाथ सदा जिनके तिनके,
बन ही घर है, घर ही बनु है ॥

—केशवदास

३३

सच्ची प्रार्थना केवल मुंह से नहीं होती। निस्स्वार्थ सेवा भी परमात्मा की प्रार्थना है।

—महात्मा गांधी

३४

जबतक जीव मात्र के साथ एकता महसूस न हो तबतक प्रार्थना उपवास, जप-तप सब थोथे हैं।

—महात्मा गांधी

३५

प्रार्थना निष्फल हर्गिज नहीं जाती, किन्तु हमें यह पता नहीं लगता कि वह कौन-सा फल देती है।

—महात्मा गांधी

३६

पूजा की खास विधि या शब्दों की तरफ़ ईश्वर नहीं देखता, वह तो हमारे कृत्यों और हमारी वाणी के आरपार देखता है।

—महात्मा गांधी

३७

बिना परमात्मा में सजीव श्रद्धा के प्रार्थना अथवा उपवास का कोई अर्थ नहीं। मनुष्यों की आत्मा की गहराई में से पहले श्रद्धा आनी चाहिए।

—महात्मा गांधी

३८

हम जिसका ध्यान करते हैं, वही होते हैं, इसलिए प्रार्थना की ज़रूरत है।

—महात्मा गांधी

३९

मैं उस परमात्मा के अतिरिक्त और किसीको परमात्मा नहीं जानता, जिसका लाख-लाख प्राणियों के हृदय में वास है।

—महात्मा गांधी

४०

हम अपना भगवान् कहां देखें ? उत्तर स्पष्ट है। उसे हमें अपने कामों में देखना चाहिए। यदि हम 'यज्ञ' समझकर कार्य करें तो हृदय में भगवान् की स्थापना हो सकती है।

—महात्मा गांधी

४१

पूजा पैर से हो सकती है, हाथ से हो सकती है और जिह्वा से हो सकती है। पूजा सच्ची होनी चाहिए।

—महात्मा गांधी

४२

मैं उस महान् पुरुष को जानता हूं, जो अन्धकार से सर्वथा परे है, परम ज्योतिर्मय है, नित्य और शाश्वत है। हम उसे जानें, उसे जानकर ही हम मृत्यु की भावना से मुक्त हो सकते हैं; इसके अतिरिक्त दूसरी राह नहीं है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

४३

काबे जाने से नहीं कुछ शेख़ मुझको इतना शौक़।
राह वह बतला कि मैं दिल में किसीके घर करूं॥

—मीर

४४

ख़ुदा के बन्दे तो हैं हज़ारों,
बनों में फिरते हैं मारे-मारे ।
मैं उसका बन्दा बनूंगा जिसको,
ख़ुदा के बन्दों से प्यार होगा ।।

—इक़बाल

४५

तू क्या समझेगा ऐ बुतसाज़ ! यह परदे की बातें हैं ।
तराशा जिसको, थी पहले से वह तसवीर पत्थर में ।।

—सीमाब

४६

हम उसीको ख़ुदा समझते हैं,
जो मुसीबत में याद आ जाये ।

—असर

४७

जाइये किस वास्ते ऐ दर्द मैख़ाने के बीच ।
और ही मस्ती है अपने दिल के पैमाने के बीच ।।

—दर्द

४८

जान जाये हाथ से जाये न सत ।
है यही इक बात हर मज़हब का तत ।।

—इक़बाल

४९

वो हमारे क़रीब होता है,
जब हमारा पता नहीं होता ।

—जिगर

५०

शेख काबा होके पहुंचा,
हम कनिश्ते[1] दिल में हो।
'दर्द' मंज़िल एक थी,
टुक राह का ही फेर था॥

५१

तू दिल में तो आता है, समझ में नहीं आता।
मालूम हुआ बस, तेरी पहचान यही है॥

—अकबर

५२

ख़ुदा का नाम गो अकसर,
ज़बानों पर है आ जाता।
मगर काम इससे जब चलता,
कि यह दिल में समा जाता॥

—अकबर

५३

शक्ती भी शान्ती भी भक्तों के गीत में है।
धरती के बासियों की मुक्ती भी प्रीत में है॥

इक़बाल

५४

जिन्दगी ख़ुद ही इबादत है, मगर होश नहीं।

—जिगर

[1] मन्दिर।

: ४ :

प्रार्थना

१

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि ।
वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि ।
बलमसि बलं मयि धेहि ।
ओजोऽस्योजो मयि धेहि ।
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि ।
सहोऽसि सहो मयि धेहि ।

—यजुर्वेद

—(हे भगवान् !) आप तेज-स्वरूप हैं, मुझे तेजस्वी बनाइये। आप वीर्य-रूप हैं, मुझे वीर्यवान् बनाइये। आप बलस्वरूप हैं, मुझे बलवान् बनाइये। आप ओज-स्वरूप हैं, मुझे ओजस्वी बनाइये। आप मन्यु-[1] स्वरूप हैं, मुझमें मन्यु को धारण कीजिये। आप सह-[2]स्वरूप हैं, मुझे सहस्वान् बनाइये।

२

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ॥

—यजुर्वेद

—हे देव सविता ! समस्त दुर्गुणों को हमसे दूर कीजिये और जो कल्याण-प्रद है, उसे हमें प्राप्त कराइये।

[1] अनौचित्य के प्रतिकार के लिए उत्पन्न होनेवाला क्रोध।

[2] विरोधियों का दमन करनेवाली शक्ति।

३

यद् अग्ने स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम् ।
स्युष्टे सत्या इहाशिषः ।

—ऋग्वेद

—हे प्रकाश-स्वरूप ! जब मैं तू हो जाऊं या तू मैं हो जाय तो जीवन-भर के तेरे वे सब आशीर्वाद सत्य, सफल हो जायं ।

४

आयुरस्मै धेहि जातवेदः
प्रजां त्वष्टरधिनिधेह्यस्मै ।
रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै,
शतं जीवति शरदस्तवायम् ॥

—अथर्ववेद

—हे ज्ञान के अधिष्ठातृ देवता ! मनुष्य को आयु दो कि वह सम्यक् ज्ञानार्जन करे । हे सृष्टि के अधिष्ठाता ! तुम इसको तेजस्वी सन्तान दो, जो इसके ज्ञान का अभिवर्द्धन करे । हे सविता ! तुम इसे तेज और पुष्टि दो कि यह तुम्हारा होकर सौ वर्ष तक जिये ।

५

पुनरपि जननम्, पुनरपि मरणम्,
पुनरपि जननी जठरे शयनम् ।
इह संसारे बहु दुस्तारे,
कृपया पारे पाहि मुरारे ॥

—शंकराचार्य

—बार-बार पैदा होना, मरना, माता के गर्भ में आना—यही संसार में लगा रहता है । यह संसार-सागर अत्यन्त दुर्गम है । हे भगवान्, कृपया शरणागत की रक्षा करो, बेड़ा पार लगाओ ।

६

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम राष्ट्रे राजन्यः शूरइष-

व्योऽति व्याधी महारथी जायताम् द्रोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः । पुरन्ध्रियोषाः जिष्णु रथेष्टाः सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायताम् निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न औषधय पच्यन्ताम् योगक्षेमो नः कल्पन्ताम् ।

—यजुर्वेद

—हे अतुलित शक्तिवाले ब्रह्म ! हमारे राष्ट्र में ओजस्वी चरम शक्ति के ज्ञाता उत्पन्न हों । हमारे राष्ट्र में बड़े-बड़े रथारोही, शत्रुओं को कुचल देनेवाले महापराक्रमी योद्धा उत्पन्न हों । हमारे राष्ट्र में गायें खूब दूध देनेवाली, बैल खूब पराक्रमी और दुर्वह बोझ वहन करनेवाले और स्त्रियां स्नेहमयी कुल-लक्ष्मी हों । राज्य में सभीको जीवनवृत्ति मिले और हमारे युवक आकर्षक तथा तेजस्वी हों । हमारे राष्ट्र में हमेशा समय से बादल बरसें, हमारी औषधियां और फसलें खूब पकी-पकाई, फलवती हों । हमारे राष्ट्र में जो कुछ पहले न था, वह सभी वैभव सुलभ हो और जो वैभव अभी है, वह सदा सुरक्षित रहे ।

७

अविनयमपय विष्णो दमय मनः शमय विषयमृगतृष्णाम् ।
भूतदयां विस्तारय तारय संसारसागरतः ।।

—शंकराचार्य

—हे भगवान् ! मेरी अविनय दूर करो, मेरे मन को संयमी बनाओ, विषयोपभोग की मृगतृष्णा को शान्त करो, करुणा का विस्तार करो, मुझे संसार-सागर के पार उतारो ।

८

सुरासुरस्वान्तचकोरचुम्बिता,
समस्तसन्तापचयापनोदिनी ।
महानिशीथे मम मानसे कदा,
स्फुरिष्यति त्वन्मुखचन्द्रचन्द्रिका ।।

—जगन्नाथ

—हे भगवान् ! देवताओं तथा असुरों के अन्तःकरण-रूपी चकोरों से चुम्बित और समस्त सन्तापों के समूह को विनष्ट करनेवाली आपके मुख-चन्द्र की चन्द्रिका कब घोर अन्धकार से पूर्ण मेरे मन की रात्रि में प्रकाश करेगी।

९

अकस्मादस्माकं यदि न कुरुते स्नेहमथतत्।
वसस्व स्वीयान्तर्विमलजठरेऽस्मिन्पुनरपि ॥

—शंकराचार्य

—यदि तुझे अकारण मुझसे स्नेह नहीं है तो भी अपने निवास-स्थान इस अन्तःकरण में प्रवेश तो कर !

१०

विपरीतेषु कालेषु परिक्षीणेषु बन्धुषु।
त्राहिमाम् कृपया कृष्ण शरणागतवत्सल ॥

—जब समय की दशा मेरे प्रतिकूल हो—अर्थात् बुरे समय में, जब बन्धु-बान्धव मेरा साथ छोड़ दें, तब हे शरणागतवत्सल कृष्ण ! कृपा करके मेरी रक्षा करना।

११

या कुन्देन्दु तुषारहारधवला,
या शुभ्रवस्त्रावृता।
या वीणा वरदण्डमंडितकरा,
या श्वेतपद्मासना ॥
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभि-
र्देवैः सदा वन्दिता।
सा मां पातु सरस्वती भगवती,
निःशेष जाड्यापहा ॥

—जो कुन्द, चन्द्र और हिम के हार के समान उज्जवल हैं, जिन्होंने श्वेत वस्त्र धारण कर रक्खा है, जिनका हाथ वीणा के सुन्दर दण्ड से

सुशोभित है, जो श्वेत कमल पर विराजती हैं, ब्रह्मा-विष्णु-शिव आदि सभी देवता जिनकी सदा वन्दना करते हैं, वे समस्त अज्ञान और जड़ता का विनाश करनेवाली भगवती सरस्वती मेरी रक्षा करें।

१२

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अन्तरजामी,
करनी कछु न करी!
औगुन मो तें बिसरत नाहीं,
पल छिन घरी-घरी।
दारा-सुत-धन मोह लिये हैं,
सुधि-बुधि सब बिसरी।
'सूर' पतित को बेग उधारौ,
अब मेरी नाव भरी॥

१३

मैं परदेसी काहि पुकारौं, इहां नहीं कोउ मेरा।
यह संसार ढूंढ़ि सब देखा, एक भरोसा तेरा॥

—कबीर

१४

मेरा मुझमें कुछ नहीं, जो-कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागै है मोर॥

—कबीर

१५

प्रीति-पतवार लैके हूजिये करनधार,
आज हरि! लाज की जहाज डगमगी है। **—वृन्द**

१६

हे पुजारी! जिस स्थान पर प्राणों के देव एकाकी जग रहे हैं,
उस मन्दिर के द्वार खोल!

आज मुझे उस देवता के दर्शन करने हैं—
उस दिन मैं बाहर भटक-भटककर न जाने किसे खोजता रह गया;
सन्ध्याकालीन मेरी आरती का पारायण सम्पूर्ण नहीं हुआ,
पुजारी ! अपनी जीवन-ज्योति से मेरा जीवन-दीप प्रज्ज्वलित कर दे;
आज मैं अत्यन्त एकान्त में पूजा का साज साऊंगा !
उस एकाकी स्थान में, जहां विश्व के शत-शत साधकों ने
पूजा की अनन्त ज्योति प्रज्ज्वलित की है,
वहीं मैं भी अपने एकाकी दीप को प्रज्ज्वलित करूंगा !

—**रवीन्द्रनाथ ठाकुर**

१७

—हे ईश्वर ! मुझे ऐसी शक्ति प्रदान कर कि मैं कभी किसी अत्याचार के सामने आत्मसमर्पण न करूं ।

—**रवीन्द्रनाथ ठाकुर**

१८

विपदे मोरे रक्षा करो, ये नहे मोर प्रार्थना,
विपदे आमि ना येन करि भय ।
दु:ख तापे व्यथित चित्ते नाइ बा दिले सान्त्वना,
दु:खे येन करिते पारिजय ।
सहाय मोर ना यदि जुटे, निजेर बलना येन टुटे,
संसारे ते घटिले क्षति लभिले शुधु वंचना ।
निजेर मने ना येन मानि क्षय ।।
आमारे तुमि करिबे त्राण ये नहे मोर प्रार्थना,
तरिते पारि शक्ति येन रय ।
आमार भार लाघव करि नाइ वा दिले सान्त्वना,
बहिते पारि एमनि येन हय ।
नम्रशिरे सुखेर दिने तोमार मुख लड बचिने,

दुखेर हाते निखिल धरा ये दिन करे वंचना,
तोमारे येन नाकरि संशय ।।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

—विपत्ति में मेरी रक्षा करो—यह मेरी प्रार्थना नहीं है। (केवल यही हो कि) मैं विपत्ति से डरूं नहीं।

दुःख और व्यथित चित्त को तुमने सान्त्वना नहीं दी तो न सही, (केवल यही हो कि) में दुःख को जीत सकूं।

यदि मेरा कोई सहायक न मिले तो ऐसा हो कि मेरा अपना बल न टूटे, संसार में यदि क्षति ही होती रहे और मैं वंचना ही पाता रहूं तो भी ऐसा हो कि मैं अपने मन में हार न मानूं।

तुम मेरी रक्षा करोगे, ऐसी मेरी प्रार्थना नहीं है। (केवल यही हो कि) मुझमें इतनी शक्ति हो कि मैं तैर सकूं।

मेरा भार हलका करके तुमने सान्त्वना नहीं दी तो न सही। (केवल यही हो कि) मैं स्वयं उसे ढो सकूं।

सुख के दिनों में मैं सिर झुकाकर तुम्हारा ही मुख पहचान लूंगा। दुःख की रात को जब सारी पृथ्वी मुझे धोखा दे (उस दिन ऐसा हो कि) मैं तुम्हारे ऊपर सन्देह न करूं।"

१६

ऐ दैवी शक्तियो! वे मनुष्य तुम्हें जान ही नहीं सकते, जिन्हें दुःखपूर्ण समय में भोजन करने का दुर्भाग्य प्राप्त नहीं हुआ तथा जिन्होंने रोते हुए और प्रातःकाल की प्रतीक्षा करते हुए रातें नहीं काटीं।

—गेटे

२०

प्रभु! अपने गीतों के पंखों से ही मैं तेरे चरणों का स्पर्श कर पाता हूं। तू ऐसा वरदान दे कि एक ही प्रणाम में मेरा सारा शरीर तेरे चरणों का स्पर्श कर ले।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

: ५ :

उद्बोधन

१

उच्छ्रयस्व महते सौभगाय

—ऋग्वेद

—महान् सौभाग्य के लिए ऊंचा उठो।

२

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास ऐते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय।
युवा पितास्वया रुद्र एषं सुदुघा पृथिवी सुदिना महद्भ्यः॥

—ऋग्वेद

—तुममें से कोई बड़ा नहीं है, न कोई छोटा है। भाइयों की तरह मिलकर सौभाग्य के लिए आगे बढ़ो। तुम्हारा रक्षक और पिता परमेश्वर है और अनेक प्रकार की धन-धान्य देनेवाली पृथ्वी तुम्हारी माता है।

३

दानेनादानम्। अक्रोधेन क्रोधम्।
श्रद्धयाऽश्रद्धाम्। सत्येनानृतम्।
एषा गतिः। एतदमृतम्।
स्वर्गच्छ। ज्योतिर्गच्छ॥

—सामवेद

दान-द्वारा कृपणता पर विजय प्राप्त करो। शान्ति-द्वारा क्रोध पर विजय प्राप्त करो। श्रद्धा से अश्रद्धा पर विजय प्राप्त करो। यही सन्मार्ग है। यही स्वर्ग है। स्वर्ग की ओर जाओ। प्रकाश की ओर जाओ।

४

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥

—ऋग्वेद

—तुम्हारे अभिप्राय एकसमान हों, तुम्हारे अन्तःकरण एकसमान हों और तुम्हारे मन एकसमान हों, जिससे तुम्हारा सुसाह्य—सामुदायिक शक्ति का विकास होगा।

५

पुरिसा ! तुममेव तुमं मित्तं किं बाहिरा मित्तमिच्छसि। —बुद्ध

—पुरुषो ! तुम स्वयं अपने मित्र हो, बाहर मित्र कहां ढूंढते हो।

६

भगवान् बुद्ध का अन्तिम उपदेश—"आनन्द ! अब तुम स्वयं अपने मार्ग-प्रदर्शक बनो, स्वयं अपने पर आश्रित हो, किसी दूसरे का आश्रय ढूंढने का प्रयत्न मत करो। सत्य ही तुम्हारा पथ-प्रदर्शक होना चाहिए। आनन्द ! तुम सोच रहे होगे कि तुम्हारा आचार्य तुमसे विदा हो रहा है, पर ऐसा मत सोचो। जो सिद्धान्त और नियम मैंने तुम्हें बताये हैं, जिनका मैंने प्रचार किया है, वे ही तुम्हारे आचार्य होंगे और वे सदैव जीवित रहेंगे।

७

बुद्धि-बिबेक की जोती बुझी,
ममता-मद-मोह-घटा घनी घेरी।
है न सहारो अनेकन हैं ठग,
पाप के पन्नग की रही फेरी।।
त्यों अभिमान को कूप इतै,
उत कामना-रूप सिलान की ढेरी।
तू चलु मूढ़ सम्हारि अरे मन,
राह न जानी है रैन अंधेरी।।

—रूपनारायण पाण्डेय

८

नृसिंहो ! उठो; इस भ्रम में मत रहो कि तुम भेड़ हो।

—विवेकानन्द

९

आपनि अवश होलि, तबे बल दिवि तुइ कारे !
उठे दांड़ा, उठे दांड़ा, भेड़े पड़िस नारे
करिस ने लाज, करिस ने भय, आपना के तुइ करे ने जय,
सबाइ तखन सांड़ा देबे डाक दिवि तुइ जारे।
बाहिर यदि हलि पथे, फिरिस तनि तुइ कोनोमते
थेके थेके पिछन पाने चास ने बारे बारे।
नेइ-ये रे भव त्रिभुवने, मय शुधु तोर निजेर मने,
अभय-चरण शरण करे, बाहिर हये जारे।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

—तू स्वयं अवश हो पड़ा, तो फिर दूसरों को क्या बल देगा !
उठकर खड़ा हो, उठ खड़ा हो, हिम्मत न हार।
मत लजा, मत डर, तू अपने-आपको जीत ले,
फिर तू जिसे पुकारेगा, वही जवाब देगा।
तू अगर मार्ग में निकल पड़ा है तो अब किसी बात से पैर पीछे न हटा।
रह-रहकर पीछे की ओर बार-बार न देख,
अरे, त्रिभुवन में कहीं भी भय नहीं है, भय है सिर्फ तेरे अपने मन में।
अभय-चरण की शरण गह के बाहर चला जा।"

१०

यदि तोरे डाक शुने केउ न आसे, तबे एकला चलो रे,
एकला चलो, एकला चलो, एकला चलो रे।
यदि केउ कथा ना कय,
(ओरे ओरे ओ अभागा)
यदि सबाइ थाके मुख फिराये सबाइ करे भय—
तबे परान खुले,

ओ तुइ, मुख फुटे तोर मनेर कथा, एकला बलो रे।
यदि सबाइ फिरे जाय,
(ओरे ओरे ओ अभागा)
यदि गहन पथे जाबार काले फिरे ना चाय—
तबे पथेर कांटा—
ओ तुइ रक्त माखा चरनतले एकला दलो रे।
यदि आलो ना धरे—
(ओरे ओरे ओ अभागा)
यदि झड़ बादले आधार राते दुयार देय घरे।
तबे बज्रानले,
आपन बुकेर पांजर ज्वालिये तिये एकला ज्वलो रे।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

—यदि तेरी पुकार सुनकर कोई न आये तो तू अकेला ही चल पड़।
अकेला ही चल, अकेला ही चल, अकेला ही चल।
यदि कोई बात न करे,
(अरे, ओ अभागे !)
यदि सब लोग मुंह फेर लें, सब लोग डरते रहें
तो प्राण खोलकर
मुंह खोलकर, अपने मन की बात अकेला ही कह।
यदि सभी लौट जायं,
(अरे, ओ अभागे !)
यदि गहन मार्ग में जाने के समय तेरी ओर कोई ताके भी नहीं,
तो रास्ते के कांटे को—
तू अपने लहू-लुहान तलवे से अकेला ही दलन कर।
यदि प्रदीप न जलता हो,
(अरे, ओ अभागे !)

यदि आंधी और बादल अंधेरी रात में घर का द्वार बन्द कर दें
तो फिर वज्र की अग्नि से,
अपनी छाती की हड्डियों को जलाकर तू अकेला ही जल पड़।

११

वाए[1] नादानी ! कि तू मोहताजे-साक़ी हो गया।
मय भी तू, मीना[2] भी तू, महफ़िल भी तू, साक़ी भी तू ।।

—इक़बाल

१२

सर शमा-सा कटाइये पर दम न मारिये ।
मंज़िल हज़ार सिम्त हो हिम्मत न हारिये ।।

—आतिश

१३

क़िस्मत में जो लिखा है वो आयेगा आपसे ।
फैलाइये न हाथ न दामन पसारिये ।।

—आतिश

१४

मिटे न बात कहीं तुम पै मिटनेवालों की ।
तुम्हारे हाथ शर्म है इन सफ़ेद बालों की ।।

—चकबस्त

१५

सितारों से आगे जहां और भी हैं ।
अभी इश्क़ के इम्तिहां और भी हैं ।।
तू शाही[3] है परवाज़[4] है काम तेरा ।
तेरे सामने आसमां और भी हैं ।।

[1] हाय। [2] शराब पीने का पात्र। [3] बाज़; गरुड़। [4] उड़ना।

इसी शाखो-गुल[1] में उलझकर न रहजा ।
तेरे सामने आशियां[2] और भी है ॥

—इक़बाल

१६

बिरादराने नौजवां, बढ़े चलो, बढ़े चलो ।
झुके न हिन्द का निशां, बढ़े चलो, बढ़े चलो ॥
जो अक़्ल राह रोक दे तो दामन उसका छोड़ दो ।
जो मज़हब आके टोक दे तो उसकी क़ैद तोड़ दो ॥
जवां हो दर से जंग लो सलामे-मौजे-गंग लो ।
नज़र फिरा लो तूर से, बुला रही है दूर से—
हिमालया की चोटियां बढ़े, चलो, बढ़े चलो ॥

—जमील मज़हरी

१७

खेतों को दे लो पानी यह बह रही है गंगा ।
कुछ कर लो नौजवानो उठती जवानियां हैं ॥

—हाली

१८

खिरद[3] को गुलामी से आज़ाद कर ।
जवानों को बूढ़ों का उस्ताद कर ॥

—इक़बाल

१९

अगर तुम्हें अपने भीतर जवानी की ताक़त महसूस होती है, अगर तुम जीते रहना चाहते हो, अगर तुम निर्दोष, सर्वांगपूर्ण और उभरती हुई ज़िन्दगी का आनन्द लेना चाहते हो—अर्थात् यदि तुम सर्वोच्च आनन्दों को जानना चाहते हो, जिनकी कोई भी जीवित प्राणी आकांक्षा

---

[1] टहनी और फूल। [2] घोंसला; घर। [3] अक्ल।

कर सकता है, तो मजबूत बनो, महान् बनो और जो कुछ भी तुम करो उसमें दृढ़ता से काम लो।'' अपने चारों ओर जीवन के बीज बोओ।''

—प्रिंस क्रोपाटकिन

२०

यदि आपमें महान् गुण और असाधारण योग्यता नहीं है तो चिन्ता न कीजिये। यदि आप कोई महान् नेता या महात्मा नहीं बन पाये हैं तो भी दुःख या क्लेश करने की आवश्यकता नहीं। अपने कर्त्तव्य-पथ पर बढ़े चलना ही जीवन की सार्थकता है।

—हेनरी वार्ड

: ६ :

मनुष्य, मनुष्यता

१

पुरुषो वै प्रजापतेर्नेदिष्ठम्।

—शतपथ ब्राह्मण

—समस्त प्राणियों में मनुष्य परमेश्वर के निकटतम है।

२

पुरुषः प्रजापतिः।

—शतपथ ब्राह्मण

—मनुष्य ईश्वर ही है।

३

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि,
नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्।

—महाभारत

—मैं यह परम गुप्त तत्व की बात बताता हूं कि संसार में मनुष्य से बढ़कर और कुछ नहीं है।

४

खादते मोदते नित्यं शुनकः शूकरः खरः ।
तेषामेषां को विशेषो वृत्तिर्येषां तु तादृशी ॥

—कुत्ते, सूअर और गधे आदि भी खाते-पीते, खेलते-कूदते हैं । यदि मनुष्य भी केवल इन्हीं बातों में जीवन की सार्थकता मानता है तो फिर उसमें और पशु में अन्तर ही क्या है ।

५

उद्योगं पुरुषलक्षणम् ।

—महाभारत

—उद्योग करना ही मनुष्य का लक्षण है ।

६

तु जानी व अंकाशतस्ती कि शख़्सी ।
तु आबी व पिंदाश्ततस्ती सबूई ॥

—सनाई

—तू प्राण है, परन्तु तूने अपने-आपको एक व्यक्ति समझ लिया है । तू जल है, परन्तु तूने अपने-आपको घड़ा समझ रक्खा है ।

७

बह्र इल्मे दर नमे पिनहां शुदा ।
दर से गज़ तन आलमे पिनहां शुदा ॥

—रूमी

—तू विद्या-रूपी सागर है, जो कि एक बूंद में व्याप्त है । एक तीन हाथ के शरीर में सम्पूर्ण संसार छिपा हुआ है ।

८

ए गुलामत अक़्लो तदबीरातो होश ।
तू चराई ख़ेश ए अरज़ां फ़रोश ॥

—रूमी

—बुद्धि, उपाय और ज्ञान यह सब तेरे दास हैं, फिर तू स्वयं को उतने सस्ते मूल्य में क्यों बेचना चाहता है।

९

शरीर से ऊपर उठो। समझो और अनुभव करो कि मैं अनन्त हूं, परम आत्मा हूं और इसलिए मुझपर मनोविकार और लोभ भला कैसे प्रभाव डाल सकते हैं?

—रामतीर्थ

१०

केवल बुद्धि की ही वृद्धि होने से मनुष्य बहुधा हृदय-शून्य हो जाता है। दया, प्रेम, शान्ति आदि हृदय के सात्विक गुण हैं। वे बुद्धि के प्रखर तेज से झुलस जा सकते हैं।

—विवेकानन्द

११

हमारा मनुष्य बनना पहली पढ़ाई है।

—महात्मा गांधी

१२

जिस मनुष्य को अपने मनुष्यत्व का भान है, वह ईश्वर के सिवा और किसीसे नहीं डरता।

—महात्मा गांधी

१३

हे मनुष्यो! मनुष्य बनो, यह तुम्हारा प्रथम कर्त्तव्य है। चाहे कोई दीन हो या धनी, वृद्ध हो या बालक—सभीके साथ मनुष्यता का व्यवहार करो।

—रूसो

१४

मनुष्य बहुत होते हैं, पर मनुष्यता विरले में ही होती है।

—प्रेमचन्द

१५

प्रत्येक व्यक्ति एक बिगड़ा हुआ परमात्मा है ।

—**एमर्सन**

१६

प्रत्येक मनुष्य एक चलता-फिरता आश्चर्य है । उसकी बनावट दो तरह की है—दिव्य और पार्थिव । अपने पार्थिव अंश की ओर देखकर उसे नम्र होना चाहिए और दिव्य अंश की ओर देखकर अपना आचरण पवित्र एवं उदात्त रखना चाहिए ।

—**कार्लाइल**

१७

ज्यों तिल माहीं तेल है,
चकमक माहीं आगि ।
तेरा सांई तुज्झ में,
जागि सकै तो जागि ।।

—**कबीर**

१८

बड़े भाग मानुष-तन पावा ।
सुरदुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा ।।

—**तुलसी**

१९

गर फ़रिश्तावश हुआ कोई तो क्या ।
आदमीयत चाहिए इन्सान में ।। —**दाग़**

२०

हैं कुछ खराबियां मेरी तामीर[1] में जरूर ।
सौ मरतबा बनाके मिटाया गया हूं मैं ।। —**आसी**

---

[1] **बनावट**

२१

क्या ग़ज़ब है कि नहीं इन्सां को इन्सान की क़द्र।
हर फ़रिश्ते को यह हसरत है कि इन्सां होता ।।

—दाग़

२२

जानवर, आदमी, फरिश्ता, ख़ुदा ।
आदमी की हैं सैकड़ों क़िस्में ।।

—हाली

२३

फ़रिश्ते से बेहतर है इन्सान बनना।
मगर इसमें पड़ती है मेहनत ज़ियादा ।।

—हाली

२४

आदमियत और शै है, इल्म है कुछ और चीज़।
कितना तोते को पढ़ाया, पर वोह हैवां रह गया ।।

—ज़ौक

२५

बस कि दुश्वार है हर काम का आसां होना।
आदमी को भी मयस्सर नहीं इन्सां होना ।।

—ग़ालिब

२६

यह काम नहीं आसां इन्सान को मुश्किल है।
दुनिया में भला होना, दुनिया का भला करना ।।

—दाग़

२७

ख़ुदा तो मिलता है इन्सान ही नहीं मिलता।
य' चीज़ वह है कि देखी कहीं नहीं मैंने ।। —इक़बाल

२८

गुल्शने-हस्ती में यकरंगी का आलम आम था।
पहले सिर्फ़ इक क़ौम थी इन्सान जिसका नाम था॥

—सीमाब

२६

परिन्दों की दुनिया का दरवेश[1] हूं मैं।
कि शाही बनाता नहीं आशियाना॥

——इक़बाल

३०

ख़ुदी[2] को कर बुलन्द इतना,
कि हर तक़दीर से पहले।
ख़ुदा बन्दे से ख़ुद पूछे,
'बता तेरी रज़ा क्या है?'

— इक़बाल

३१

जो फ़रिश्ते करते हैं, कर सकता है इन्सान भी।
पर फ़रिश्तों से न हो जो काम है इन्सान का॥

—ज़ौक़

: ७ :

मातृभूमि, देश-प्रेम

१

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः

—अथर्ववेद

—पृथ्वी माता है, मैं पृथ्वी का पुत्र हूं।

---

[1] फ़क़ीर [2] आत्मभाव।

२

सानो भूमि विसृजतां माता पुत्राय मे पयः। —**अथर्ववेद**

—वह मातृभूमि मुझे उत्तम दूध से पुष्ट करनेवाली हो।

३

यस्याश्चतस्रः प्रदिशः पृथिव्या
यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवः।
या बिभर्त्ति बहुधा प्राणदेजत्
सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु॥

—**अथर्ववेद**

—जिसकी चार दिशाएं हैं, जहां किसानी की जाती है, जो कि अनेक प्रकार से प्राणियों की रक्षा करती है, वह मातृभूमि हमें गौओं तथा अन्नों से संयुक्त करे।

४

यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे,
यस्यां देवा असुरानभ्यवर्त्तयन्।
गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा
भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु॥

—**अथर्ववेद**

—जहां हमारे पूर्वजों ने अद्भुत कार्य और पराक्रम किये, जहां देवों ने असुरों और राक्षसों का हनन किया और जो गौवों, अश्वों और पक्षियों की माता है, वह जन्मभूमि हमें ऐश्वर्य और तेज प्रदान करे।"

५

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा,
अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः।
दीर्घन आयुः प्रतिबुध्यमाना,
वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम॥

—**अथर्ववेद**

—हे मातृभूमि, तेरे जो प्रदेश हैं, वे रोग, क्षय और भय से सर्वथा रहित हों। हम दीर्घायु हों। हम सदा सजग रहें और आवश्यकता पड़ने पर प्राण को हथेली पर लेकर तेरे लिए सर्वस्व त्यागने को भी तैयार रहें।

६

ये ग्रामा यदरण्यं याः सभा अधि भूम्यां।
ये संग्रामास्समितयस्तेषु चारु वदेम ते॥

—अथर्ववेद

—पृथ्वी पर जो ग्राम और वन हैं, जो सभाएं और समितियां हैं, जो सार्वजनिक सम्मेलन हैं, उनमें, हे मातृभूमि, हम तुम्हारे लिए सुन्दर भाषण करें।

७

दुर्लभं भारते जन्म मानुष्यं तत्र दुर्लभम्।

—महाभारत

—भारत में जन्म पाना दुर्लभ है, वहां मनुष्य का जन्म पाना तो और भी दुर्लभ है।

८

गायन्ति देवाः किल गीतकानि,
धन्यास्तु ते भारत भूमि भागे।
स्वर्गापवर्गास्पद मार्गभूते,
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्॥

—विष्णु-पुराण

—देवता लोग भी निरन्तर यही गाया करते हैं कि जिन्होंने स्वर्ग और मोक्ष के मार्गभूत भारतवर्ष में जन्म लिया है, वे पुरुष हम देवताओं की अपेक्षा भी अधिक सौभाग्यशाली हैं।

९

धन्य है वह भारत जहां न्यायालय हैं, पर कोई अपराधी नहीं, कारागार हैं, पर कोई बन्दी नहीं, घर में सम्पूर्ण समृद्धि है पर ताले नहीं।

—ह्वे नच्यांग

१०

अयि भुवन मनमोहिनी।
निर्मल सूर्य करोज्वलधारिणि,
जनक जननी जननि। अयि भुवन०।
नील सिन्धु जल धौत चरणतल,
अनिल विकम्पित श्यामल अंचल।
अम्बर चुम्बित भाल हिमाचल,
शुभ्र तुषार किरीटिनि॥ अयि भुवन०॥
प्रथम प्रभात उदित तव गगने,
प्रथम सामरव तव तपोवने।
प्रथम प्रचारित तव वन भवने,
ज्ञान धर्म कत काव्य काहिनी॥ अयि भुवन०॥
चिर कल्याणमयी तुमि धन्य,
देस बिदेसे वितरिछ अन्न।
जाह्नवि जमुना विगलित करुणा,
पुण्य पियूषस्तन्यवाहिनी॥ अयि भुवन०॥

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

११

सुजलाम् सुफलाम् मलयज शीतलाम्
शस्य श्यामलाम् मातरम्।
शुभ्र ज्योत्सनां पुलकित यामिनीम्।
फुल्ल कुसुमित द्रुमदल शोभिनीम्।

सुहासिनीम् सुमधुर भाषिणीम् ।
सुखदाम् वरदाम् मातरम् ।
वन्देमातरम् !

—बंकिमचन्द्र

१२

मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना ।
हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दोस्तां हमारा ॥

—इक़बाल

१३

खाके वतन का मुझको हर ज़र्रा देवता है ।

—इक़बाल

१४

गुंचे हमारे दिल के इस बाग़ में खिलेंगे।
इस खाक से उठे हैं, इस ख़ाक में मिलेंगे ॥

—चकबस्त

१५

गर्दोगुबार यां का ख़िलअत है अपने तन को ।
मरकर भी चाहते हैं खाकेवतन कफ़न को ॥

—चकबस्त

१६

दरो दीवार पै हसरत से नज़र करते हैं ।
रुख़सत, ऐ अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं ॥

—वाजिदअली शाह

१७

सच कहो ऐ बुलबुलो ! किस बाग़ से आती हो तुम ।
है हमारे भी तुम्हें कुछ आशियाने की खबर ॥

—यकीन

१८

फ़िदा वतन पै जो हो आदमी दिलेर है वह।
जो यह नहीं तो फ़क़त हड्डियों का ढेर है वह॥

—चकबस्त

१६

हुब्बुल वतन अज़ मुल्के सुलैमां ख़ुश्तर।
ख़ारेवतन अज़सुम्बुलो रैहां ख़ुश्तर॥
यूसुफ़ कि व मिस्र पादशाही मीकर्द।
मी गुफ़्त गदा बुदने कनाआं ख़ुश्तर॥

—अज्ञात

—जन्मभूमि का प्रेम संसार के राज्य से बढ़कर है। जन्मभूमि के कांटे भी हंसराज और नाज़बू (सुगन्धित पौधा) से अच्छे हैं। मिस्र में साम्राज्य का वैभव भोगते हुए भी यूसुफ़ कहा करता था कि कनाआं (उसकी जन्मभूमि) का भिखारी होना उसके लिए इससे अच्छा था।

२०

ब अहलो लहा अजहू अरमीमन महादेऊ।
बमना ज़िलाइल मुंद्दीना मिनहुम वसेयत्तरू।
मअस्सरे अख़लाकन हसानन कुल्लहुम।
नजूमुन अजाअत सुम्मा ग़ाबुल हिन्दू।
बसहबी क़यामा फ़ीलमकामिल् हिन्दे।
यक़ूनूनालातहजन फाइन्नक़ह तो वज्जरू।[1]

—अबुल हक़म

[1] अप्रैल १६३२ के 'बिशाल-भारत' में प्रकाशित श्री ज्ञानदेव सूफ़ी मौलवी, आलिम फ़ाज़िल के एक लेख से उद्धृत। यह हज़रत मुहम्मद के चाचा अबुल हक़म की रचना है।

—यदि वह (पतित मनुष्य) अपने जीवन में एक बार भी अच्छे हृदय से महादेवजी की उपासना कर ले तो धर्म के मार्ग में जितनी श्रेणियां हैं, वह उन सबसे उत्तीर्ण हो सकता है। भारत की यात्रा से सारे शुभ कर्म मनुष्य को प्राप्त हो जाते हैं, क्योंकि भारतवासी धर्म का मार्ग बताने में आदर्श गुरु हैं। हे प्रभु, कब वह पवित्र प्रातःकाल होगा जब मैं भारतवर्ष का दर्शन करूंगा, जहां पहुंचकर मनुष्य दुःख और क्लेश से मुक्त हो जाता है।

२१

छूटती है आदमी से 'दाग़' कब हुब्बे वतन।
गो नहीं हूं मैं मगर हरदम मेरा दिल घर में है।।

—दाग़

२२

सख़्ती से दब सकेगा न हिन्दोस्तां 'फ़लक'।
लोहे का यह चना है चबाया न जायगा।।

—लालचन्द 'फ़लक'

२३

तेरी हस्ती हिमालय की चोटी बनी।
माहो-ख़ुर्शीद की उसपै बिन्दी लगी।।
अज़मते-ज़िन्दगी की क़सम है हमें।
तेरी इज्ज़त पै सर तक कटा देंगे हम।।
आंख उठाके जो देखा किसीने तुझे।
छावनी अपनी लाशों की छा देंगे हम।
ऐ वतन! ऐ वतन! ऐ वतन! ऐ वतन!

—साग़र निज़ामी

२४

विश्व-भरन-पोषन कर जोई।
ताकर नाउं भरत अस होई।।

—तुलसीदास

२५

जिसकी रज में लोट-लोटकर बड़े हुए हैं।
घुटनों के बल सरक-सरककर खड़े हुए हैं॥
परमहंस-सम बाल्यकाल में सब सुख पाये।
जिसके कारण 'धूल भरे हीरे' कहलाये॥
हम खेले-कूदे हर्षयुत,
जिसकी प्यारी गोद में।
हे मातृभूमि! तुझको निरख,
मग्न क्यों न हों मोद में॥

—**मैथिलीशरण गुप्त**

२६

चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूंथा जाऊं।
चाह नहीं, प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊं॥
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर हे हरि डाला जाऊं।
चाह नहीं, देवों के सिर पर चढ़ूं भाग्य पर इठलाऊं॥
मुझे तोड़ लेना वनमाली,
उस पथ में देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने,
जिस पथ जायें वीर अनेक॥

—**माखनलाल चतुर्वेदी**

२७

क्या गुलाबों पर करेंगे आप कमलों को निसार।
क्या करेंगे कोकिलों को छोड़कर बुलबुल को प्यार॥
क्या रसालों को सरो शमशाद पर देवेंगे वार।
क्या लखेंगे हिन्द में ईरान का मौसिम बहार॥
क्या हिरासे और दजला आदि से होगी तरी।
तज हिमालय-सा सुगिरिवर पूतसलिला सुरसरी॥

भीम-अर्जुन की जगह पर ग़ेब रुस्तम को बिठा ।
सभ्य लोगों में नहीं दृग आप सकते हैं उठा ।।
साथ कैकाउस-दारा-प्रेम की गांठें गठा ।
क्या भला होगा रसातल भोज विक्रम को पठा ।।
कर्ण की ऊंची जगह जो हाथ हातिम के चढ़ी ।
तो समझिये ढह पड़ेगी आपकी गौरव-गढ़ी ।।

—हरिऔध

२८

भारत की सबसे बड़ी सम्पत्ति उसकी आध्यात्मिक निधि है । अतः सब-कुछ खोकर भी उसकी रक्षा अनिवार्य है ।।

—दयानन्द

२९

सारे भारत का अभिमान हमारी प्रकृति नहीं, बल्कि संस्कृति है ।

—विनोबा भावे

३०

यदि अगले पचास बर्ष तक तुम अन्य सभी देवताओं को भुलाकर केवल राष्ट्रदेबता की ही आराधना करो तो कुछ खोनेवाला नहीं है ।

—विवेकानन्द

३१

मनुष्य जिस जगह रहता हो, उस स्थान पर उसे गर्व होना चाहिए और मनुष्य को ऐसे रहना चाहिए, जिससे उस स्थान को उस मनुष्य पर गर्व हो सके ।

—अब्राहम लिंकन

३२

सम्पूर्ण भारत का उद्धार करने का भार अकारण अपने सिर पर न लो । अपने निज का ही उद्धार करने का प्रयत्न करो । हम स्वयं ही भारतबर्ष हैं, हमारा उद्धार ही भारतबर्ष का उद्धार है, इतना भार

काफ़ी है। जिस रोज़ प्रत्येक भारतीय अपने उद्धार में लग जायगा, भारतवर्ष के उद्धार का मार्ग अपने-आप खुल जायगा।

—महात्मा गांधी

: ८ :

राष्ट्र, राष्ट्रीयता, राजनीति

१

राष्ट्राणि वै विशः

—ऐतरेय ब्राह्मण

—जनता ही राष्ट्र को बनाती है।

२

विशि राजा प्रतिष्ठितः

—यजुर्वेद

—राजा की स्थिति जनता पर निर्भर करती है।

३

ध्रुवाय ते समितिः कल्पतामिह।

—अथर्ववेद

—हे राजन् ! तुम्हारी स्थिति समिति (लोक-सभा) पर ही निर्भर हैं।

४

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपसेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु॥

—अथर्ववेद

—लोक-कल्याण की इच्छा रखनेवाले आत्म-ज्ञानी ऋषियों ने प्रारंभ में दीक्षा लेकर तप किया। इससे राष्ट्र, बल और ओज का निर्माण हुआ, अतएव सब विबुध इस राष्ट्र की भक्ति करें।

५

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति ।

—अथर्ववेद

—ब्रह्मचर्य के तप से ही राजा राष्ट्र की रक्षा करने में समर्थ होता है।

६

विशा वा क्षत्रियो बलवान् भवति

—शतपथ ब्राह्मण

—जनशक्ति से ही राजा शक्तिशाली होता है ।

७

पातकं वा सदोषं वा कर्त्तव्यं रक्षता सदा ।
राज्यभारनियुक्तानामेष धर्मः सनातनः ।।

—रामायण

—जिसके कन्धों पर शासन का भार हो, उसे व्यक्तिगत पाप और दोष का विचार त्याग कर, जिस प्रकार भी हो सके सदा प्रजा का हित ही करना चाहिए । यही सनातन राजधर्म है ।

८

अकरात् कुरुते कोषम् अवधा देशरक्षणम् ।
देशवृद्धिमयुद्धाश्च स मंत्री बुद्धिमानश्च स ।।

—मेरुतुंगाचार्य

—बुद्धिमान् मंत्री वह है, जो बिना कर लगाये ही कोष की वृद्धि करता है, बिना किसीकी हिंसा किये देश की रक्षा करता है तथा बिना युद्ध किये ही राज्य का विस्तार करता है ।

९

धर्मेण राज्यं विन्देत धर्मेण परिपालयेत् ।
धर्ममूलां श्रियं प्राप्य न जहाति न हीयते ।।

—महाभारत

—धर्म से राज्य प्राप्त करे और धर्म से ही उसका परिपालन करे । धर्ममूलक राज्यलक्ष्मी को पाकर न तो राजा उसे छोड़ता है और न

वह राजा को छोड़ती है।

१०

य एव यत्नः क्रियते परराष्ट्रविमर्दने ।
स एव यत्नः कर्त्तव्यः स्वराष्ट्रपरिपालने ॥

—महाभारत

—जो प्रयत्न दूसरे राष्ट्रों के विनाश के लिए किया जाता है, वही अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए करना चाहिए।

११

न राज्यं प्राप्तमित्येव वर्तितव्यमसाम्प्रतम् ।
श्रियं ह्यविनयो हन्ति जरा रूपमिवोत्तमम् ॥

—महाभारत

—राज्य प्राप्त हो गया, ऐसा समझकर अनुचित व्यवहार नहीं करना चाहिए। उद्दण्डता महिमा को उसी प्रकार नष्ट कर देती है जैसे सुन्दर रूप को बुढ़ापा।

१२

कृतं त्रेता युगं चैव द्वापरं कलिरेव च ।
राज्ञोवृत्तानि सर्वाणि राजा हि युगमुच्यते ॥

—मनु

—सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग—ये सब शासक के ही विशेष कर्म हैं। इसलिए राजा को ही युग कहते हैं।

१३

राजा कालस्य कारणम् —महाभारत

—शासक ही अच्छे या बुरे समय का कारण—युग-निर्माता होता है।

१४

राजदोषेण हि जगत्स्पृश्यते जगतः स च ।

—महाभारत

—शासक के दोष से जगत् और जगत् के दोष से शासक प्रभावित होता है।

१५

नैव राज्ञा दरः कार्यो जातु कस्याञ्चिदापदि ।
अथ चेदपि दीर्णः स्यान्नैव वर्तेत दीर्णवत् ।।

... ...

दीर्णं हि दृष्ट्वा राजानं सर्वमेवाऽनुदीर्यते ।

—महाभारत

—कैसी भी विपत्ति उपस्थित हो, शासक को कभी भयभीत नहीं होना चाहिए । यदि मन में भय का संचार भी हो जाय, तो भी ऊपर से भयभीत न दिखाई पड़े···क्योंकि शासक को भयभीत देखकर सारा समाज भयभीत हो जाता है ।

१६

दानेनाऽन्यं बलेनाऽन्यं तथा सूनृतया परम् ।
सर्वतः प्रतिगृह्णीयाद्राज्यं प्राप्येह धार्मिकः ।।

—महाभारत

—राज्य को प्राप्त करके धार्मिक शासक किसीको दान से, किसीको बल-प्रयोग से और किसीको सुन्दर वाणी से वश में कर ले—किसीको अपने प्रतिकूल न होने दे ।

१७

न वैराज्यं न राज्यं च न च दंडी न दांडिकः ।
धर्मेणैवहि प्रजा सर्वे रक्षन्ति स्व परस्परम् ।।

—महाभारत

—पहले न अराजकता थी, न राजसत्ता थी । न कोई दण्ड-विधान था, न कोई दण्ड देनेवाला था। धर्म के अनुसार ही सब एक-दूसरे की रक्षा करते थे ।

१८

भेदे गणा विनश्येयुर्भिन्नास्तु सुजयाः परैः ।
तस्मात् संघातयोगेन प्रयतेरन् गणाः सदा ।।

अर्थाश्चैवाधिगम्यन्ते संघातबलपौरुषैः ।
बाह्याश्च मैत्रीं कुर्वन्ति तेषु संघातवृत्तिषु ।।

—महाभारत

—विभाजित होने पर गणों का विनाश निश्चित है। एक-दूसरे से पृथक् हो जाने पर शत्रु के लिए उनको पराजित करना सरल हो जाता है। अतः संघबद्ध होकर गणों को अपना प्रभाव बनाये रखना चाहिए। संघ-बद्ध सेना के पुरुषार्थ-द्वारा समृद्धि प्राप्त होती है। बाहरी लोग भी संघशक्ति की मैत्री प्राप्त करना चाहते हैं।

१९

गणानां च कुलानां च राज्ञां भरतसत्तम ।
वैर सन्दीपनावेतौ लोभामर्षौ नराधिप ।।
लोभमेको हि वृणुते ततोऽमर्षमनन्तरम् ।
तौ क्षयव्ययसंयुक्तावन्योन्यञ्च विनाशिनौ ।।

—महाभारत

—हे राजन्, गणों में और राजकुलों में भी शत्रुता को प्रोत्साहित करनेवाले दो प्रमुख कारण हैं––लोभ और ईर्ष्या। जब कोई (गण या राजकुल) लोभ का वरण करता है तब ईर्ष्या उसीका अनुगमन करती है। ये दोनों अवगुण क्षय और व्यय को जन्म देकर विनाश का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

२०

अभ्यन्तरं भयं रक्ष्यमसारं बाह्यतोभयम् ।
अभ्यन्तरं भयं राजन् सद्यो मूलान् कृन्तति ।।
अकस्मात् क्रोधमोहाभ्यां लोभाद्वाऽपि स्वभावजात् ।
अन्योन्यं नाभि भाषन्ते तत् पराभव लक्षणम् ।।

—महाभारत

—आन्तरिक संकटों से सावधान रहना चाहिए, बाह्य संकट महत्त्वहीन होते हैं, क्योंकि हे राजन्! आन्तरिक संकट अतिशीघ्र ही मूलोच्छेद कर

देते हैं। जब किसी गण के सदस्य अकस्मात् क्रोध, मूर्खता अथवा स्वाभाविक दोष के कारण आपस में मंत्रणा करना बन्द कर देते हैं, तब पतन के लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

२१

अनाधृष्टाः सीदत सहौजसः।

—यजुर्वेद

—सुसंगठित होकर रहने से तुम्हें कोई धमका न सकेगा।

२२

ऋद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रयाहुः। —रघुवंश

—सुखी और समृद्ध राज्य पृथ्वी पर स्वर्ग है।

२३

राष्ट्ररत्नानि बालकाः।

—बालक राष्ट्र के रत्न हैं।

२४

एकं हन्यान्न वा हन्यादिषुर्मुक्तो धनुष्मता।
बुद्धिर्बुद्धिमतोत्सृष्टा हन्याद् राष्ट्रं सराजकम्॥

—महाभारत

—किसी धनुर्धर द्वारा छोड़ा हुआ बाण किसी एक को मारे या न मारे, पर बुद्धिमान् द्वारा प्रयुक्त बुद्धि राजा के साथ-साथ सम्पूर्ण राष्ट्र का विनाश कर सकती है।

२५

एकं विष-रसो हन्ति शस्त्रेणैकश्च वध्यते।
स राष्ट्रं सप्रजं हन्ति राजानं मन्त्रविप्लवः॥

—महाभारत

—विष एक ही को—पीनेवाले को मारता है, शस्त्र से एक ही का वध होता है, लेकिन मन्त्र (भेद) का फूटना, राष्ट्र और जनता के साथ ही शासक का भी विनाश कर डालता है।

२६

स्वाधीनता का पाणिग्रहण धारासभाओं में, अदालतों में या स्कूल-कालेज के कमरों में नहीं, बल्कि क़ैदख़ानों की दीवारों में और कभी-कभी फांसी के तख़्तों पर चढ़कर ही किया जाता है।

—महात्मा गांधी

२७

हम तो राम-राज्य का अर्थ स्वराज्य, धर्मराज्य, प्रजाराज्य करते हैं। वैसा राज्य जनता के बलवान् बनने पर ही संभव है।

—महात्मा गांधी

२८

प्रजातंत्र का अर्थ मैं यह समझता हूं कि इस तंत्र में नीचे-से-नीचे और ऊंचे-से-ऊंचे आदमी को आगे बढ़ने का सामान अवसर मिलना चाहिए।

—महात्मा गांधी

२९

सरकार तो जनशक्ति का छोटा-सा अंश है।

—विनोबा भावे

३०

यदि हमको अपनी भाषा से अरुचि हो, अपने कपड़े अच्छे न लगें, अपनी पोशाक बुरी मालूम हो, अपनी चोटी से शरम लगे, अपनी वायु और अपना भोजन अच्छा न मालूम हो, अपने आदमी अपने साथ रहने के योग्य न जान पड़ें, अपनी सभ्यता अच्छी न लगे तथा विदेशी सभ्यता अच्छी लगे—सारांश यह कि अपना सब बुरा और विदेशी सब अच्छा जान पड़े तो स्वराज्य का क्या अर्थ है!

—महात्मा गांधी

३१

हरएक हिन्दुस्तानी का यह फर्ज है कि जैसे नन्हा बालक अपनी मां

की गोद से अलग नहीं होता, वैसे ही वह भी अपनी पुरानी आर्य-सभ्यता की गोद से अलग न हो।

—महात्मा गांधी

३२

राम-राज्य एक ऐसा लोकतंत्र, जिसमें ग़रीब और अमीर, स्त्री और पुरुष, गोरे और काले, जाति या मज़हब के कारण असमानता मिट गई हो; ऐसे राज्य में सब ज़मीन और सत्ता जनता के हाथ में होगी, न्याय शीघ्र, शुद्ध और सस्ता होगा, उपासना, वाणी और लेखन की स्वतंत्रता होगी, और इन सबका आधार होगा स्वेच्छा से संयम और धर्म का पालन।

—महात्मा गांधी

३३

यह समझ लेना अच्छी आदत नहीं है कि दूसरे के विचार ग़लत और सिर्फ हमारे ही ठीक हैं तथा जो हमारे विचारों के अनुसार नहीं चलते, वे देश के दुश्मन हैं।

—महात्मा गांधी

३४

तुममें से प्रत्येक को यही मालूम होना चाहिए कि सारे काम का बोझा केवल मेरे ही ऊपर है। तुममें से प्रत्येक के हृदय में सदा यही भावना रहनी चाहिए कि सम्पूर्ण भारत का भला-बुरा इस समय केवल मेरी ही कृति पर अवलम्बित है।

—विवेकानन्द

३५

बुरी सरकार के शासन में अच्छे स्त्री-पुरुषों के लिए जेल को छोड़ कर और कोई स्थान नहीं।

—महात्मा गांधी

३६

ऐ सभासदो ! सुनो, इस अमल सत्य पर ध्यान करो।
अन्याय सहन जो करता है, वह महापाप का भागी है।

—मदनमोहन मालवीय

३७

मेरा मज़हब हक़परस्ती (सत्य की पूजा) है। मेरी मिल्लत (धर्म) क़ौमपरस्ती (जाति-सेवा) है। मेरी इबादत (पूजा-पाठ) ख़ल्कपरस्ती (लोक-सेवा) है। मेरी अदालत मेरा अन्तःकरण है। मेरी जायदाद मेरी क़लम है। मेरा मन्दिर मेरा दिल है। मेरी उमंगें सदा जवान हैं।

—लाजपतराय

३८

यदि परतंत्रता परतंत्रता के नाम पर आती है तो उससे मुक्ति पाना संभव हो सकता है, परन्तु यदि वह स्वतंत्रता के नाम पर आमे तो उससे मुक्त होना बड़ा कठिन हो जाता है।

—विनोबा भावे

३९

जनता ऐसे लोगों को उखाड़ फेंकेगी, जो अपने श्रम के फल को चखने में लग गये हैं।

—राजेन्द्रप्रसाद

४०

मेरा यह पक्का खयाल है कि जबतक हमारा हरेक घर अपने आपमें एक क़िला नहीं बन जाता, तबतक हिन्दुस्तान अपने पैरों पर खड़ा न हो सकेगा, पूरी तरह आज़ाद न बन सकेगा। यह क़िला इतिहास के काले ज़माने का क़िला न होगा वरन् उस बहुत पुराने ज़माने का क़िला होगा जब हर इन्सान दूसरे के ख़िलाफ़ बुरे खयाल रक्खे बिना मर जाना जानता था।

—महात्मा गांधी

४१

उत्तम राज्य वही है, जहां शासक शासक, मंत्री मंत्री, पिता पिता, पुत्र पुत्र हों—सब अपने-अपने धर्म को समझकर उसके अनुसार आचरण करें।

—**कनफ्यूशस**

४२

शासन वही उत्तम है, जो अपने अधीनस्थों को सुखी रक्खे और जो अपने से दूर हैं, उन्हें आकर्षित करे।

— **कनफ्यूशस**

४३

यदि आप ईमानदारी से जनता का सुधार करना चाहते हैं तो कौन ऐसा प्राणी है जो अपना सुधार नहीं चाहेगा अथवा अपनी ग़लती नहीं सुधारेगा।

—**कनफ्यूशस**

४४

यदि मतदाता मूर्ख हैं तो उनके प्रतिनिधि धूर्त होंगे।

—**बर्नर्ड शा**

४५

जो मनुष्य अपने देश की संस्कृति के प्रति घृणा उत्पन्न करता है, वह सबसे बड़ा अपराधी है। ऐसे आदमी का मर जाना ही अच्छा है।

—**प्लेटो**

४६

व्यक्तिगत और सामाजिक अनुशासन के बिना स्वतंत्रता एक सुनहला स्वप्नमात्र है।

—**राधाकृष्णन्**

४७

जहां कलह तहं सुख नहीं,
कलह सुखनि कौ सूल।

सबै कलह इक राज में,
राज कलह कौ मूल ।।

—नागरीदास

४८

लोग लगे सिगरे अपमारग,[1]
पोच, भलो कछु जानि न जाई ।
चंचल हस्तिन[2] को सुखदा,
अचला[3] बिपदा मन को दुखदाई ।।
हंस,[4] कलानिधि[5] सूर[6] प्रभाहत,
षंड[7] शिखंडिन[8] की अधिकाई ।
'केशव' पावस-काल किधौं,
अविवेकी महीपति की ठकुराई ।।

—विज्ञान-गीता

४९

चढ़ती देव-पदारविन्द पर,
ज्यों अंजली सुमन की ।
राष्ट्र-देवता चरणों पर त्यों,
बलि चढ़ती सज्जन की ।।
शिरोधार्य होते प्रसून वे,
शाखाच्युत होकर भी ।
मान्य नहीं होते हैं कंटक,
रहकर द्रुमदल पर भी ।।

—अंगराज

---

[1] जलयुक्त मार्ग; कुमार्ग। [2] हाथी; प्रमादी। [3] पृथ्वी; स्थायी। [4] पक्षी विशेष; विवेकी। [5] चन्द्रमा; कलावान्। [6] सूर्य; शूर। [7] झाल-झंखाड़; कापुरुष। [8] मोर; कपटी।

: ९ :

संकल्प, इच्छा

१

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु

—यजुर्वेद

—मेरे मन के संकल्प शुभ एवं कल्याणकारी हों ।

२

काममय एवायः पुरुषः ।

—बृहदारण्यक

—मनुष्य ही इच्छामय है ।

३

यं यं कामयते सोस्य संकल्पादेव समुत्तिष्ठति ।

—छान्दोग्य उपनिषद

—मनुष्य जिस-जिस वस्तु की इच्छा करता है, वह उसे संकल्प-मात्र से प्राप्त हो जाती है ।

४

नह्ययुक्तेन मनसा किञ्च न सम्प्रति शक्नोति कर्तुम् ।

—शतपथ ब्राह्मण

—अयुक्त मन से कोई मनुष्य किसी कार्य को ठीक ढंग से नहीं कर सकता ।

५

संकल्पमूलः कामो यज्ञाः संकल्प संभवाः ।
वृत्तानि यम धर्माश्च संकल्पजाः स्मृताः ।।

—मनुस्मृति

—सभी कामनाओं का मूल कारण संकल्प ही होता है, सभी शुभ कार्य संकल्प से ही सिद्ध होते हैं । सभी व्यवहार, यम अर्थात् सत्य, अहिंसा

अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि और सभी धर्म संकल्प से ही उत्पन्न या सिद्ध होते हैं।

६

यादृश्मिन् धायि तमपस्यया विदत् ।

—ऋग्वेद

—मनुष्य जिस लक्ष्य में मन को लगा देता है, उसे वह श्रम से प्राप्त कर लेता है।

७

दर निहादे हर कसे सद ख़ूक हस्त ।
ख़ूक बायद कुश्त या ज़ुन्नार बस्त ।।

—अत्तार

—प्रत्येक मनुष्य के पास स्वभावतः इच्छाओं-रूपी हजारों सूअर होते हैं। या तो उनको समाप्त ही कर देना उचित है, अथवा उनको चराना चाहिए।

८

मनुष्य की इच्छा अगर पूरी न हो तो समझना चाहिए कि उसकी इच्छा पूरी नहीं थी।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

: १० :

शिक्षा

१

मज्ज्यन्त्यविचेतसः ।

—ऋग्वेद

—अज्ञानी ही डूबते हैं।

२

आचार्याद्ध्येव विद्या विदिता साधिष्ठं प्रापयति ।

—छान्दोग्य-उपनिषद

—आचार्य से पढ़ी हुई विद्या ही मनुष्य को उच्च पद पर पहुंचाती है।

३

आशिक्षायै प्रश्निनम् । उपशिक्षाया अभिप्रश्निनम् ।

—यजुर्वेद

—जो प्रश्न करता है, वही किसी विषय को जान सकता है। समीक्षक ही किसी वस्तु को ठीक-ठीक जान सकता है।

४

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ।।

—गीता

—यह बात ध्यान में रख कि नम्रतापूर्ण व्यवहार, बार-बार प्रश्न और सेवा करने से तत्वदर्शी ज्ञानी पुरुष तुझे अपने-आप उपदेश देंगे।

५

अनुब्रुवाणो अध्येति न स्वपन् ।

—ऋग्वेद

—अभ्यास से ही मनुष्य सीखता है, न कि सोते हुए।

६

यः पठति लिखति पश्यति,
परिपृच्छति पण्डितानुपाश्रयति ।
तस्य दिवाकरकिरणै-
र्नलिनीदलमिवविकास्यते बुद्धिः ।।

—जो पढ़ता है, लिखता है, पूछता है, विद्वानों की सेवा-संगति करता है, उसकी बुद्धि सूर्य की किरणों से कमलिनी-दल की भांति विकसित होती है।

७

पुराणमित्येव न साधु सर्वं,
न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम् ।

सन्तः परीक्ष्यान्यतरद्भजन्ते,
मूढः परप्रत्ययनेय बुद्धिः ॥

—कालिदास

—पुराना होने से ही सबकुछ उत्तम नहीं हो जाता और कोई काव्य नवीन होने के कारण ही हेय नहीं होता। सज्जन परीक्षा करने के बाद ही दो में से एक को ग्रहण करते हैं, मूढ़ की बुद्धि दूसरे के पीछे चलती है।

८

मौनं ज्ञानं प्रयच्छति।

—महाभारत

—मौन ज्ञान को देता है।

९

पिदर चूं इल्मो मादर हस्त आमाल।
बिसाने क़ुरत्तुलऐनस्त अहवाल॥

—शब्सतरी

—तेरे पिता विद्या और मां तेरे कार्य हैं। यह सब तुझे प्रिय होने चाहिए।

१०

अमल कां अज़ सरे अहवाल बाशद।
बसे वेहतर जे इल्म काल बाशद॥

—शब्सतरी

—मौखिक ज्ञान से अनुभव-द्वारा प्राप्त ज्ञान कहीं उत्तम होता है।

११

जो अहंकारी को शिक्षा देता है, उसे स्वयं शिक्षा की आवश्यकता है। —गुलिस्तां

१२

जिस आदमी को लड़कपन में ऐसी शिक्षा मिली हो, जिससे उसका

श्रीर उसकी इच्छा का पालन करने में तत्पर हो और उसके करने योग्य सब काम वह खुशी से करता हो, जिसकी बुद्धि स्वच्छ, स्थिर और सार-असार को समझनेवाली हो, जिसके मन में प्रकृति के अच्छे सिद्धान्तों के ज्ञान का खजाना हो, जिसने बुराई मात्र से घृणा करना और अपने भाइयों को अपने ही समान समझना सीखा हो, उसीको, मैं कह सकता हूं, अच्छी शिक्षा मिली है। —हक्सले

१३

चिड़ियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना सीखने के बाद अब हमें इन्सानों की तरह पृथ्वी पर चलना सीखना है।

—राधाकृष्णन

१४

मस्तिष्क में भरे हुए ज्ञान का जितना अंश काम में लाया जाय, उतने ही का कुछ मूल्य है, बाकी सब व्यर्थ बोझा है।

—महात्मा गांधी

१५

वास्तविक शिक्षा का यह एक आवश्यक अंग होना चाहिए कि बालक इस बात का ज्ञान प्राप्त करे कि जीवन-संग्राम में वह प्रेम के द्वारा घृणा पर, सत्य के द्वारा असत्य पर और सहनशीलता के द्वारा बल-प्रयोग पर बहुत सहज में विजय प्राप्त कर सकता है।

—महात्मा गांधी

१६

हर व्यक्ति को ज्ञान में स्वावलम्बी होना चाहिए।

—विनोबा भावे

१७

सरस बाक्य पद अरथ तजि,
सब्दचित्र समुहात।

दधि घृत मधु पायस तजत,
वायस चाम चबात ॥

—देव

१८

सागर में जल बहुत है,
गागर में न समाय ।

१९

न कुछ हम हँस के सीखे हैं,
न कुछ हम रो के सीखे हैं ।
जो-कुछ थोड़ा-सा सीखे हैं,
किसीके होके सीखे हैं ॥

—अकबर

२०

यही जाना कि कुछ न जाना हाय।
सो भी इक उम्र में हुआ मालूम ॥

२१

अक़्लमन्द अपने तजर्बों से सीखता है, ज्यादा अक़्लमन्द दूसरों के तजर्बों से सीखता है ।

—चीनी कहावत

२२

जहां ज्ञान का अभाव होता है, वहां अज्ञान अपनेको विज्ञान कहने लगता है ।

—बर्नर्ड शा

२३

अच्छे गुणों को सीखने में तुम्हारी यह धारणा होनी चाहिए कि तुम्हारा अभिप्राय अपने सुधार का है, न कि लोक में बड़ाई पाने का ।

—एक चीनी महात्मा

२४

किसी भी पुस्तक का सबसे महान् अंश वह नहीं है, जिसमें एक बड़ा विचार हो, बल्कि वह है जो विचारों में स्पन्दन भरे।

—गेटे

२५

मनुष्य को केवल ज्ञान-प्राप्ति के लिए ही नहीं भटकना चाहिए, उसे जीवन में उतारने का भी अभ्यास करना चाहिए।

—कनफ्यूशस

२६

जानने पर यह समझना कि मैं जानता हूं और न जानने पर यह अनुभव करना कि मैं नहीं जानता, यही सच्ची जानकारी है।

—कनफ्यूशस

२७

ज्ञान को ही पोषण देने से मनुष्य को आज की काल-रात्रि भोगनी पड़ रही है। ज्ञान के साथ-साथ विवेक को भी पोषित करते चलिये तो भविष्य की हर सीढ़ी निरापद होगी।

—बर्ट्रेंड रसेल

: ११ :

आसक्ति, अनासक्ति

१

अर्थानामीश्वरो यः स्यादिन्द्रियाणामनीश्वरः।
इन्द्रियाणामनैश्वर्यादैश्वर्याद् भ्रश्यते हि सः॥

—महाभारत

—जो बहुत धनवान् होकर भी इन्द्रियों पर अधिकार नहीं रखता, वह इन्द्रियों पर अधिकार न रखने के कारण ही ऐश्वर्य से भ्रष्ट हो जाता है।

२

रथः शरीरं पुरुषस्य राज—
न्नात्मा नियन्तेन्द्रियाण्यस्य चाश्वाः ।
तैरप्रमत्तः कुशली सदश्वै—
र्दान्तैः सुखं याति रथीव धीरः ।।

—महाभारत

—हे राजन् ! मनुष्य का शरीर रथ है, बुद्धि सारथी है और इन्द्रियां घोड़े हैं। इनको वश में करके सावधान रहनेवाला चतुर एवं धीर पुरुष बश में किये हुए घोड़ों से रथी की भांति सुखपूर्वक यात्रा करता है।

३

एतान्यनिगृहीतानि व्यापादयितुमप्यलम् ।
अविधेया इवादान्ता हयाः पथि कुसारथिम् ।।

—महाभारत

—शिक्षा न पाये हुए तथा काबू में न आनेवाले घोड़े जैसे मूर्ख सारथी को मार्ग में मार गिराते हैं, वैसे ही ये इन्द्रियां वश में न रहने पर पुरुष को मार डालने में समर्थ होती हैं।

४

प्रमदा मदिरा लक्ष्मीर्विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।
दृष्ट्वैवोन्मादयत्येका पीता चान्यातिसंचयात् ।।

—सुरा तीन प्रकार की होती है—प्रमदा, मदिरा और लक्ष्मी। पहली तो देखने मात्र से उन्मत्त बना देती है, दूसरी पीने पर और तीसरी अतिशय संचय से।

५

घृतकुम्भसमा नारी तप्तांगारसमः पुमान् ।
तस्माद्घृतं च वह्निं च नैकत्र स्थापयेद् बुधः ।।

—स्त्री घी से भरे हुए घड़े के समान और पुरुष अंगार के समान है।

इसलिए बुद्धिमान् मनुष्य कभी घी और आग को इकट्ठा न रक्खे, क्योंकि दोनों के संयोग से ज्वाला प्रज्वलित हो उठती है।

६

वेदस्योपनिषत् सत्यं सत्यस्योपनिषत् दमः।
दमस्योपनिषन्मोक्षः एतत् सर्वानुशासनम् ॥

—महाभारत

—वेद का उपनिषद अर्थात् रहस्य है सत्य। सत्य का उपनिषद है दम और दम अर्थात् इन्द्रिय-दमन का उपनिषद है मोक्ष। यही सम्पूर्ण धर्मशास्त्र का निचोड़ है।

७

यत्रश्रीर्यौवनं वापि परदारोऽपि तिष्ठति।
तत्र सर्वान्धता नित्यं मूर्खत्वं चापि जायते ॥

—नारद-पुराण

—जहां धन है, यौवन है तथा परस्त्री भी है, वहां सदा सभी अन्धे और मूर्ख बने रहते हैं।

८

आत्मनस्तु क्रियोपायो नान्यत्रेन्द्रिय निग्रहात्।

—महाभारत

—मनुष्य का आध्यात्मिक कल्याण इन्द्रिय-निग्रह से ही होता है।

९

विषयासक्तचित्तानां गुणाः को वा न नश्यति।
न वैदुष्यं न मानुष्यं नाभिजातं न सत्यवाक् ॥

—विषयासक्त मनुष्यों के कौन-से गुण नष्ट नहीं होते ! उनमें न विद्वत्ता रहती है, न मनुष्यता रहती है, न स्वाभिमान रहता है और न सत्यवचन रहता है।

१०

नितान्तं संप्रसक्तानां कान्तामुखं विलोकने ।
नाशमायान्ति सुव्यक्तं यौवनेन समं श्रियः ।।

—कामन्दक

—जो लोग स्त्री के मुख के प्रति अतिशय आसक्त रहते हैं, उनकी यौवन-श्री नष्ट हो जाती है ।

११

न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति ।

—ऋग्वेद

—स्त्रियों के साथ स्थायी मित्रता नहीं होती ।

१२

नास्ति मोहसमासवः

—महाभारत

—मोह के समान कोई आसव (मादक वस्तु) नहीं होता ।

१३

स्त्रियोऽपि स्त्रैणमवमन्यते ।

—कौटिल्य

—स्त्रियां भी स्त्रैण पुरुष की अवमानना करती हैं ।

१४

अशुभद्वेषिणः स्त्रीषु न प्रसक्ताः ।

—कौटिल्य

—जो अपना भला चाहता हो वह स्त्री में आसक्त होकर न रहे ।

१५

दुर्लभः स्त्रीबन्धनान्मोक्षः ।

—कौटिल्य

—स्त्री के बन्धन से छुटकारा पाना बड़ा कठिन है ।

१६

मोह-बिपिन कहं नारि बसन्ता ।

—तुलसी

१७

भर जोबन में सीलबंत,
बिरला होय तो होय।

—कबीर

१८

चलौ चलौ सब कोइ कहै, पहुंचै बिरला कोय ।
एक कनक अरु कामिनी, दुर्गम घाटी दोय ।।

—कबीर

१९

या भव-पारावार को, उलंघि पार को जाय ।
तिय-छबि छायाग्राहनी, गहै बीच ही आय ।।

—बिहारी

२०

मैं भंवरा तोहिं बरजिया, बन-बन बास न लेय ।
अटकेगा कहुं बेल से, तड़पि-तड़पि जिय देय ।।

—कबीर

२१

पहले थीं, अब से दूर, बहुत दिल में हसरतें ।
अब आरज़ू यह है कि कोई आरज़ू न हो ।।

—अकबर

२२

यों सबको भुला दे कि तुझे कोई न भूले ।
दुनिया ही में रहना है तो दुनिया से गुज़र जा ।।

—फ़ानी

२३

आराम अगर चाहे तो आ राम की तरफ़।
फन्दे में फंसा चाहे तो जा दाम की तरफ़॥

: १२ :

मैत्री, प्रीति, वियोग

१

सतां साप्तपदं सख्यम्।

—महाभारत

—सात पग एक साथ चलने से ही सत्पुरुषों में मैत्री हो जाती है।

२

दुर्लभं प्राकृतं मित्रं दुर्लभः क्षेमकृत् सुतः।
दुर्लभा सदृशी भार्या दुर्लभः स्वजनः प्रियः॥

—स्वाभाविक मित्र, हितकारी पुत्र, मन के अनुकूल पत्नी और स्नेही स्वजन—ये सब दुर्लभ हैं।

३

द्रवत्वात्सर्वलोहानां निमित्तान्मृग पक्षिणाम्।
भयाल्लोभाच्च मूर्खाणां संगतं दर्शनात्सताम्॥

—धातुओं का पिघलने से, पशु-पक्षियों का किसी कारण-वश, मूर्खों का भय तथा लोभ से और सज्जनों का दर्शन-मात्र से परस्पर संग या मेल होता है।

४

सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम्।
विनयो वंशमाख्याति देशमाख्याति भाषितम्॥

—विश्वास से प्रेम, शरीर से भोजन, विनय से कुल और बोली से देश पहचाना जाता है।

५

न रम्यं नारम्यं प्रकृतिगुणतो वस्तु किमपि ।
प्रियत्वं यत्रस्यादितरदपि तद्ग्राहकवशात् ॥
रथाङ्गाह्वानानां भवति विधुरङ्गारशकटी—
पटीराम्भः कुम्भः स भवति चकोरीनयनयोः ॥

—कोई भी वस्तु स्वभावतः अच्छी या बुरी नहीं है; जहां वह प्रिय है वहां ही उसको ग्रहण करनेवाले अधिकारी के भेद से वह अप्रिय भी मालूम होती है। चकवों के लिए चन्द्रमा जलती हुई अंगीठी है और वही चकोरी के लिए शीतल जल से भरा घड़ा है।

६

इन्दुः क्व क्व च सागरः क्व च रविः,
पद्माकरः क्व स्थितः ।
क्वाभ्रं वा क्व मयूरपंक्तिरमला
क्वालिः क्व वा मालती ॥
मन्दाध्वक्रमराजहंसनिचयः
क्वासौ क्व वा मानसं ।
यो यस्याभिमतः स तस्य निकटे,
दूरेऽपि वा वल्लभः ॥

—कहां चन्द्रमा और कहां समुद्र ! कहां सूर्य और कहां कमल-वन ! कहां बादल और कहां मयूरों की विमल पंक्ति ! कहां भौंरे और कहां मालती ! (दूर रहते हुए भी इनमें परस्पर प्रीति है) जो जिसको चाहता है, वह पास रहे या दूर प्रियतम ही है।

७

विश्वासश्चार्थचर्या च सामान्यं सुखदुःखयोः ।
मर्षणं प्रणयश्चैव मित्रवृत्तिरियं सतां ॥

—सौन्दरनन्द

—विश्वास, उपकार, सुख-दुःख में समान भाव, क्षमा और प्रेम—

यही सज्जनों की मित्रता या मैत्री की नीति-रीति है।

८

प्रियो भवति दानेन प्रियवादेन चापरः।
मन्त्रमूलबलेनान्यो यः प्रियः प्रिय एव सः॥

—महाभारत

—कोई मनुष्य दान से प्रसन्न होता है, कोई प्रिय वचन से, कोई मन्त्र तथा औषधि के बल से; लेकिन जो सचमुच प्रिय है, वह सदा प्रिय रहता है।

९

शीलं प्रधानं पुरुषे तद् यस्येह प्रणश्यति।
न तस्य जीवितेनार्थो न धनेन न बन्धुभिः॥

—महाभारत

—मनुष्य में शील ही मुख्य है। जिसका शील नष्ट हो जाता है, उसका जीवन, धन और भाई-बन्धुओं से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

१०

प्रेम कभी दावा नहीं करता, लेता नहीं, सदा देता है। प्रेम सहन करता है, विरोध कदापि नहीं करता और न बदला ही लेता है।

—महात्मा गांधी

११

हमारा सबसे बड़ा सौभाग्य तब आता है जब पराये अपने हो जाते हैं और सबसे बड़ा दुर्भाग्य तब आता है जब अपने पराये हो जाते हैं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

१२

तुम्हारे स्पर्श से संभव है, वह मर जाय; दूर रहकर, संभव है, तुम उसपर अधिकार प्राप्त कर लो।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

१३

अनुराग अन्तर्वेदना की सबसे उत्तम औषधि है।

—प्रेमचन्द

१४

न तल्ख़स्त सब्रेके बर यादे ओस्त।
कि तल्ख़ी शकर बाशद अज़दस्ते दोस्त।।

—शेख़सादी

—उसकी स्मृति में जो संतोष है, वह कड़वा नहीं है। मित्र की दी हुई कड़वी वस्तु भी मीठी हो जाती है।

१५

कड़वे आदमी का शहद भी कड़वा होता है।

—शेख़सादी

१६

निगाह अहले मोहब्बत तमाम सौगंदस्त।

—ख़ानख़ाना

—मुहब्बत वालों की निगाह ही पूरी सौगन्द है।

१७

अमिय गारि, गारेउ गरल,
गारि कीन्ह करतार।
प्रेम बैर की जननि जुग,
जानहिं बुध न गंवार।।

—तुलसी

१८

कै लघु कै बड़ मीत भल,
सम सनेह दुख सोइ।
तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस,
मिले महाविष होइ।।

—दोहावली

१६

जीव चराचर जहं लगे,
है सबको हित मेह ।
तुलसी चातक मन बस्यो,
घन सों सहज सनेह ।।

—तुलसी

२०

बैर मूल हर हितवचन,
प्रेम मूल उपकार ।
दोहा शुभ सन्दोह सों,
तुलसी कियो विचार ।।

—तुलसी

२१

उपल बरसि गरजत तरजि डारत कुलिस कठोर।
चितव कि चातक मेघ तजि कबहुं दूसरी ओर ।।

—तुलसी

२२

मुख देखे की कौन मिताई !

—सूरदास

२३

समै-समै सुन्दर सबै, रूप-कुरूप न कोय ।
मन की रुचि जेती जितै, तितै तिती छबि होय ।।

—बिहारी

२४

अगिनि आंच सहना सुगम, सुगम खड़ग की धार ।
नेह निभावन एक रस, महा कठिन ब्यौहार ।।

—कबीर

२५

ना वह मिलै न मैं सुखी, कहु क्यूं जीवन होइ ।
जिन मुझको घायल कियो, मेरी दारू सोइ ।।

—दादू

२६

नीकौ हू फीकौ लगै,
जो जाके नहिं काज ।
फल-आहारी जीव कैं,
कौन काम को नाज ।।

—नागरीदास

२७

आन ऋतैं बरसैं सरसैं,
उमड़ै नदिया ऋतु पावस पाये ।

—भूषण

२८

खैर खून खांसी खुसी बैर प्रीति मधुपान ।
रहिमन दाबे ना दबै जानत सकल जहान ।।

—रहीम

२९

सो ताको सागर जहां जाकी प्यास बुझाय

—बिहारी

३०

बगियान बसन्त बसेरो कियो,
बसिये तेहि त्यागि तपाइये ना ।
दिन काम-कुतूहल के जो बने,
तिन बीच बियोग बुलाइये ना ।।

'घन प्रेम' बढ़ाय के प्रेम अहो,
बिथा-बारि वृथा बरसाइये ना।
चित चैत की चांदनी चाह-भरी,
चरचा चलिबे की चलाइये ना।

—प्रेमघन

३१

हरिया जानै रूखड़ा जो पानी का नेह।
सूखा काठ न जानही केतहु बूड़ा मेह॥ **—कबीर**

३२

मूसा न मंजार, हित कर बैठा हेकठा।
सब जाणे संसार, रस नह रहसी 'राजिया'॥

—चूहा और बिलाव यदि मेल करके इकट्ठे बैठें तो भी सारा संसार जानता है कि उनमें मेल नहीं रहेगा।

३३

चौगुनी चंचलता हू किये,
हमैं चाव ही सों चुप ह्वै रहनो है।
औगुन की बतियानहु में,
'हरिऔध' सदा गुन ही गहनो है॥
भाव तिहारे भलेई अहैं,
हमैं भूलि न भौंर कछू कहनो है।
फेरी करौ कि करौ जनि तेरी,
सरोजिनी को सब ही सहनो है॥

—रस-कलस

३४

मिलन अन्त है मधुर प्रेम का, और विरह जीवन है।
विरह प्रेम की शाश्वत गति है और सुषुप्ति मिलन है॥

—पथिक

३५

जिसको मरुभूमि समुद्र हुआ,
उस मेघव्रती की प्रतीति नहीं।
जो हुआ जल दीपक-सा उससे,
कभी पूछी निबाह की रीति नहीं ॥
मतवाले चकोर से सीखी कभी,
उस प्रेम के राज्य की नीति नहीं।
तू अकिंचन भिक्षुक है मधु का,
अलि तृप्ति कहां जब प्रीति नहीं।

—रश्मि

३६

दर तरीक़े इश्क़ बेदारी बदस्त **—रूमी**

—प्रेम के मार्ग में चतुराई बहुत बुरी चीज़ है।

३७

प्रेम इस जीवन की ज्योति है। हम किसी वस्तु के सुख को तबतक पूर्णतया अनुभव नहीं कर सकते जबतक कि हमारे साथ वे भी उसमें भाग न लें, जिन्हें हम प्यार करते हैं। और यदि संयोग से ऐसे अवसरों पर हम अकेले रहते हैं तो भी अपनी सुखानुभूति को इस आशा से संचित करते हैं कि अपने प्रेमीजनों के मिलने पर उसे बांट देंगे।

—लार्ड एवबरी

३८

मिजाज़ अच्छा अगर पाया,
तो सबकुछ उसने भर पाया।

—दाग़

अफ़सुरदा दिल के वास्ते क्या चांदनी का लुत्फ़।
लिपटा पड़ा है जिस तरह मुर्दा कफ़न के साथ ॥

—ज़ौक़

३९

मंज़िले हस्ती में दुश्मन को भी अपना दोस्त कर।
रात हो जाये तो दिखलावें तुझे दुश्मन चिराग़॥

—**आतिश**

४०

ख़ुदा करे कि मज़ा इन्तजार का न मिटे।
मेरे सवाल का वोह दें जवाब बरसों में॥

—**दाग़**

४१

उसके जाते ही हुई क्या मेरे घर की सूरत।
न वोह दीवार की सूरत है न दर की सूरत॥

—**हाली**

४२

यों ज़िन्दगी गुज़ार रहा हूं तेरे बग़ैर।
जैसे कोई गुनाह किये जा रहा हूं मैं॥

—**जिगर**

४३

हमें वक़्फ़े ग़म सरबसर देख लेते।
वोह तुम कुछ न करते मगर देख लेते॥
तमन्ना को फिर कुछ शिकायत न रहती।
जो तुम भूलकर भी इधर देख लेते॥

—**हसरत मोहानी**

४४

महफ़िले यार से उठने को उठे तो लेकिन।
दर्द की तरह उठे, गिर पड़े आंसू की तरह॥

४५

दिल से नजदीक हैं, आंखों से भी कुछ दूर नहीं।
मगर इसपर भी मुलाकात उन्हें मंजूर नहीं॥ —**सफ़ी**

४६

ज़रा देख परवाने करवट बदलकर।
सती हो गई शमअ महफ़िल में जलकर ।।

—साक़िब

४७

लुत्फ़े-बहार कुछ नहीं, गो है वही बहार।
दिल क्या उजड़ गया कि ज़माना उजड़ गया ।।

—आरज़ू

४८

हज़ारों हसरतें वह हैं कि रोके से नहीं रुकतीं।
बहुत अरमान ऐसे हैं कि दिल के दिल में रहते हैं ।।
खुदा रक्खे, मुहब्बत ने किये आबाद दोनों घर।
मैं उनके घर में रहता हूं वह मेरे दिल में रहते हैं ।।

—दाग़

४९

शमा भी कम नहीं कुछ इश्क में परवाने से।
जान देता है अगर वह, तो यह सर देती है ।।

—ज़ौक़

५०

हाल यकसां है जहां में शमा का परवाना का।
वह भी जलने के लिए है, यह भी जलने के लिए ।।

—मीर

५१

जलाये बहारों में जो आशियां को।
मैं यह कैसे समझूं कि वह बाग़बां है ।।

—मजहर

५२

दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे।
ऐसा न हो तक़दीर तमाशा न बना दे॥
मैं ढूंढ़ रहा हूं वह मेरी शमा किधर है।
जो बज़्म की हर चीज़ को परवाना बना दे॥
ऐ देखनेवालो, मुझे हँस-हँस के न देखो।
यह इश्क़ कहीं तुमको भी मुझ-सा न बना दे॥
आख़िर कोई सूरत भी तो हो ख़ानये-दिल[1] की।
काबा[2] नहीं बनता है तो बुतख़ाना[3] बना दे॥

—बहज़ाद

५३

पहलू से यार उठ गया,
सब ओ बहार बह गई॥

—नज़ीर

५४

तुम्हें ग़ैरों से कब फ़ुरसत,
हम अपने ग़म से कब ख़ाली।
चलो बस हो चुका मिलना,
न तुम ख़ाली न हम ख़ाली॥

—हसरत

५५

अजीब लुत्फ़ कुछ आपस की छेड़-छाड़ में है।
कहां मिलाप में वह बात जो बिगाड़ में है॥

—इंशा

१. दिल का घर। २. ख़ुदा का घर ३. बुतों की अर्थात् प्रेमी की जगह

५६

बाद रंजिश के गले मिलते हुए रुकता है दिल।
अब मुनासिब है यही कुछ मैं बढ़ूं कुछ तू बढ़े॥

—जौक़

५७

इश्क़ से तबीयत ने ज़ीस्त[1] का मज़ा पाया।
दर्द की दवा पाई दर्द बेदवा पाया॥

—ग़ालिब

५८

भूलकर ओ चांद के टुकड़े इधर आजा कभी।
मेरे वीराने में भी होजाये दम भर चांदनी॥

—नासिख़

५९

दोस्त गर भाई न हो, दोस्त है तो भी, लेकिन—
भाई गर दोस्त नहीं, तो नहीं कुछ भाई भी॥

—हाली

६०

चाहते हो तुम किसीको, चाहता हो वह तुम्हें।
ज़िन्दगी यह है नहीं तो ज़िन्दगी अच्छी नहीं॥

—अकबर

६१

चाहत का मज़ा बाद हमारे न मिलेगा।
हर शख़्स से तुम आप कहोगे—'हमें चाहो॥'

—दाग़

---

१. ज़िन्दगी।

६२

बेगानगी नहीं है बस इतनी दोस्ती है ।
मैं उनको जानता हूं, वे मुझको जानते हैं ।। —अकबर

६३

हिना की तरह पिस लेते है तब हम रंग लाते हैं ।

—अकबर

६४

फ़र्क क्या वाइज़ व आशिक़ में है बतायें तुमसे ।
उसकी हुज्जत में कटी, इसकी मोहब्बत में कटी ।।

—अकबर

६५

साहब-सलामत अब भी मेरी शेखजी से है ।
लेकिन छठे-छमाहे वही राह-हाट में ।।

—अकबर

६६

अल्लाह भी मजनूं को लैला नज़र आता है ।

६७

कुछ हुस्न की होती न यहां क़द्र न क़ीमत ।
जो इश्क़ कभू उसका ख़रीदार न होता ।।

—हातिम

६८

रोने से और इश्क़ में बेबाक हो गये ।
धोये गये हम इतने कि बस पाक हो गये ।।

—ग़ालिब

६९

या रब, वह न समझे हैं न समझेंगे मेरी बात ।
दे और दिल उनको जो न दे मुझको ज़बां और ।। —ग़ालिब

७०

नगरी आबाद है बसे हैं गांव।
तुझ बिन उजड़ी पड़ी है अपनी ठांव ॥

—सौदा

७१

तौबा तो कर चुका था मगर क्या करूं जलील।
बादल का रंग देख तबीयत बदल गई ॥

—जलील

७२

तुझे अठखेलियां सूझी हैं,
हम बेज़ार बैठे हैं।

—इंशा

७३

आने के वक़्त तुम तो कहीं के कहीं रहे।
अब आये तुम तो फ़ायदा? हम ही नहीं रहे ॥

—मीर

७४

मुहब्बत की दुनिया में सब-कुछ हसीं[1] है।
मुहब्बत नहीं है तो कुछ भी नहीं है ॥

—हफ़ीज

७५

कभी रोना कभी हँसना कभी हैरान हो रहना।
मुहब्बत क्या भले चंगे को दीवाना बनाती है ॥

—दर्द

---

१. सुन्दर।

७६

मुहब्बत है या कोई जी का है रोग।
सदा मैं तो रहता हूं बीमार-सा ।।

—मीर

७७

वसीयत मीर ने मुझको यही की।
कि सब-कुछ होना तू आशिक़ न होना ।।

—मीर

७८

इश्क में जब गुफ्तगू होने लगी।
'आप' से 'तुम', 'तुम' से 'तू' होने लगी ।।

७९

तकल्लुफ़ अलामत[1] है बेग़ानगी[2] की।
न डालो तकल्लुफ़ की आदत ज़ियादा ।।

—हाली

८०

अगर्चे अब तो ख़फ़ा हो लेकिन,
मुये-गये पर कभी हमारे।
जो याद हमको करोगे प्यारे,
तो हाथ अपने मला करोगे ।।

—मीर

८१

इन्सान को इन्सान से कीना[3] नहीं अच्छा।
जिस सीने में कीना हो वोह सीना नहीं अच्छा ।।

—नासिख़

१. लक्षण। २. परायापन। ३. रंजिश।

८२

दर्दमन्दों से तुम्हीं दूर फिरा करते हो कुछ।
पूछने वर्ना सभी आते हैं बीमार के पास॥

—मीर

८३

जो तूने की सो दुश्मन भी नहीं दुश्मन से करता है।
ग़लत था जानते थे तुझको जो हम मेहरबां अपना॥

—मज़हर

८४

जो किसीका कभी न यार हुआ।
वही क़िस्मत से यार अपना है॥

—असर

८५

दें ग़ैर दुश्मनी का हमारी ख़याल छोड़।
यां दुश्मनी के वास्ते काफ़ी हैं यार बस॥

—हाली

८६

दोस्तों से तो कुछ न निकला काम।
कोई दुश्मन ही काम का मिलता॥

—दाग़

: १३ :

जीवन और मृत्यु

१

आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोऽयनम्।

—अथर्ववेद

—उन्नत होना और आगे बढ़ना प्रत्येक जीव का लक्षण है।

२

नहि स्वमायुश्चकिते जनेषु

—ऋग्वेद

—मनुष्यों में कोई अपनी आयु को नहीं जानता।

३

उष्ण एव जीविष्यन् शीतो मरिष्यन्।

—शतपथ ब्राह्मण

—जीनेवाला गर्म और मरने वाला ठंडा होता है।

४

अद्यैव हसितं गीतं पठितं यैः शरीरिभिः।
अद्यैव तेन दृश्यन्ते कष्टं कालस्य चेष्टितम्॥

—अभी कुछ समय पहले जो प्राणी हँस रहे थे, उत्तम पदों का पाठ कर रहे थे, गीत गा रहे थे, वे अब नहीं दिखाई पड़ते—उनका शरीर नहीं दिखाई पड़ता। काल की कैसी कष्टप्रद क्रीड़ा है!

५

कालपाशपरिक्षिप्ता भवन्ति पुरुषा हि ये।
कार्याकार्यं न जानन्ति ते निरस्त षडिन्द्रियाः॥

—रामायण

—जो लोग शीघ्र मरनेवाले होते हैं, उनकी छहों इन्द्रियों की शक्ति नष्ट हो जाती है, इससे उन्हें करने और न करने योग्य कामों का ज्ञान नहीं रहता।

६

अन्त काले हि भूतानि मुह्यन्तीति पुराश्रुतिः।

—रामायण

—यह पुरानी कहावत है कि अन्तकाल में लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है।

७

यावद्वित्तोपार्जनशक्त-
स्तावन्निज परिवारे रक्तः ।
पश्चाज्जर्जरभूते देहे,
वार्ता पृच्छति कोपि न गेहे ।।

--मोहमुद्गर (शंकराचार्य)

—जबतक मनुष्य धन कमाने में समर्थ होता है तभी तक उसके कुटुम्बीजन उससे प्रेम करते हैं। जब शरीर जर्जर हो जाता है तो घर में कोई उसका हाल भी नहीं पूछता।

८

यावत्पवनो निवसति देहे,
तावत्पृच्छति कुशलं गेहे ।
गतवति वायौ देहापाये,
भार्या बिभ्यति तस्मिन् काये ।।

—मोहमुद्गर

—जबतक शरीर में सांस चलती है, तबतक घर में लोग कुशल-मंगल पूछते हैं। देह में की श्वास-क्रिया बन्द होने पर पत्नी भी इस शरीर से भयभीत होकर भाग खड़ी होती है।

९

अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं
दशनविहीनं जातं तुण्डम् ।
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं,
तदपि न मुञ्चत्याशा पिण्डम् ।।

—मोहमुद्गर

—अंग गल गये, बाल पक गये, दांत गिर गये---बेदांत हो गये, बूढ़े हो गये—लाठी टेककर चलते हैं—फिर भी आशा पिण्ड नहीं छोड़ती।

१०

अग्रे वह्निः पृष्ठे भानुः,
रात्रौ चिबुक समर्पित जानुः ।
करतल भिक्षा तरुतलवासः,
तदपि न मुंचत्याशापाशः ।।

—मोहमुद्गर

—सामने आग रखकर व दिन में धूप-सेवन करके ठंढक मिटाता है, रात में ठिठुर कर सोता है, भीख मांगकर भूख मिटाता है, पेड़ के नीचे रहता है, इतना होने पर भी आशा-पाश में बंधा रहता है ।

११

हटरी छोड़ि चला बनजारा ।
इस हटरी बिच मानिक मोती,
कोई बिरला परखनहारा ।
इस हटरी के नौ दरवाजे,
दसवां ठाकुरद्वारा ।।
निकसि गइ थंभी ढहि परा मन्दिर,
रलि गया चिक्कन गारा ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो,
झूठा जगत पसारा ।।

१२

हम देखत जग जात है,
जगत देख हम जाहिं ।
ऐसा कोई ना मिला,
पकरि छुड़ावै बाहिं ।। **—कबीर**

१३

कबीर जन्त्र न बाजई,
टूटि गये सब तार ।

जन्त्र बिचारा क्या करै,
चला बजावनहार ॥

१४

या तन धन की कौन बड़ाई ।
देखत नैनों के माटी मिलाई ॥
अपने ख़ातिर महल बनाया ।
आपहिं जाकर जंगल सोया ॥
हाड़ जलै जैसे लकड़ी की मोली ।
बाल जलै जैसे घास की पाली ॥
कहत कबीरा सुन मेरे गुनिया ।
आप मुवे पीछे डूब गई दुनिया ॥

—कबीर

१५

कबिरा गर्व न कीजिये,
काल गहे कर केस ।
ना जानै कहं मारिसा,
कै घर कै परदेस ॥

—कबीर

१६

उठा बगूला प्रेम का,
तिनका उड़ा अकास ।
तिनका तिनके से मिला,
तिनका तिनके पास ॥ —कबीर

१७

कबिरा धूर सकेल के, पुरिया बांधी देह ।
दिवस चारि को पेखना, अन्त खेह की खेह ॥

—कबीर

१८

जो ऊगै सो अत्थवै, फूलै सो कुम्हिलाय ।
जो चुनिये सो ढहि परै, जनमै सो मरि जाय ।।

—**कबीर**

१९

मरिये तो मरि जाइये, टूटि परै जंजार ।
ऐसा मरना को मरै, दिन में सौ-सौ बार ।।

—**कबीर**

२०

रात गंवाई सोयकर, दिवस गंवायो खाय ।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ।।

—**कबीर**

२१

इस सराय के बीच मुसाफ़िर क्या-क्या तमाशा हो रहा ।
कोई समेटत बिस्तरा है, कोई जमा के सो रहा ।।
कोई बजावै कोई गावैं, कोई बैठा रो रहा ।
कोई लगावत है सुगन्धी, कोई मैला धो रहा ।।
कोई लेबै राम-नाम औ कोई कांटा बो रहा ।
कोई बटोरे माल दौलत, कोई गांठ से खो रहा ।।
हो रही हलचल कबीरा, आज-कल दिन दो रहा ।

—**कबीर**

२२

गगन के गौन जम न गगन देहैं नग,
नगन चलैगो साथ नग न चलाइबो ।

—**भूषण**

२३

जाकी इहां चाहना है, ताकी उहां चाहना है,
जाकी इहां चाह ना है, ताकी उहां चाह ना।

—ग्वाल

२४

जब लगि मरने से डरै,
तब लगि जीवन नाहिं।

—पलटू

२५

कबीर सो धन संचिये जो आगे का होय।
मूड़ चढ़ाये गाठरी जात न देखा कोय॥

—कबीर

२६

कंकड़ चुन-चुन महल बनाया,
लोग कहैं घर मेरा है।
ना घर मेरा, ना घर तेरा,
चिड़िया रैन बसेरा है।

—कबीर

२७

कुसल-कुसल ही पूछते, जग में रहा न कोय।
जरा मुई ना भय मुआ, कुसल कहां तें होय॥

—कबीर

२८

पांचो नौबत बाजती, होत छतीसो राग।
सो मन्दिर खाली पड़ा, बोलन लागे काग॥

—कबीर

२९

कबीर नौबत आपनी दिन दस लेहु बजाय ।
यह पुर पट्टन यह गली, बहुरि न देखौ आय ।।

—**कबीर**

३०

डंका कूच का बज रहा,
मुसाफ़िर जागो रे भाई !

—**भारतेन्दु हरिश्चन्द्र**

३१

कोउ संगी नहिं उतै है इतही को संग ।
पथी, लेहु मिलि ताहि तें सबसों सहित उमंग ।।
सबसों सहित उमंग बैठि तरनी के माहीं ।
नदिया-नाव-संजोग फेरि यह मिलिहै नाहीं ।।
बरनै दीनदयाल पार पुनि भेंट न होई ।
अपनी-अपनी गैल पथी जैहै सब कोई ।।

३२

राही सोवत इत कितै चोर लगैं चहुं पास ।
तो निज धन के लेन को गिनैं नींद की स्वास ।।
गिनैं नींद की स्वास पास बसि तेरे डेरे ।
लिये जात बनि मीत माल ये सांझ-सबेरे ।।
बरनै दीनदयाल न चीन्हत है तू ताही ।
जाग-जाग रे जाग इतै कित सोवत राही ।।

—**दीनदयाल गिरि**

३३

ई जहां ता आं जहां बिसयार नेस्त ।
जुज़ दमे अन्दर मियां दीवार नेस्त ।।

—**फ़रीदुद्दीन अत्तार**

—यह संसार उस दूसरे से अधिक दूर नहीं है। बस, एक सांस-रूपी दीवाल बीच में स्थित है।

३४

नक्श पाए रफ्तगां से यह सदा है आ रही।
दो क़दम में राह तय है, शौक़े मंज़िल चाहिए॥

—आतिश

३५

ज़िन्दगी यों तो फ़क़त बाज़ी-ए-तिफ़लना[1] है।
मर्द वह है जो किसी रंग में दीवाना है॥

—चकबस्त

३६

शमा औ परवाने की हालत से यह ज़ाहिर हुआ।
ज़िन्दगी का लुत्फ़ कुछ जल-जल के मर जाने में है॥

—दर्द

३७

समझे अगर तू इतना यह जिन्दगी मरज़ है।
हो दर्द जिस तरह का, फिर वह तुझे दवा है॥

—सौदा

३८

बड़े लुत्फ़ से दिन गुज़र जाते यह भी।
बुढ़ापे में हमको जवानी जो मिलती॥ —अज्ञात

३९

मुझको मुहब्बत अब न रही जिन्दगी के साथ।
क्या जिन्दगी गुज़र न सके जब ख़ुशी के साथ॥

—अकबर

---

१. लड़कों का खेल।

४०

वह मरता नहीं जिसकी ख़ूबी हो बाकी ।
वह ग़ायब नहीं जिसका हो ज़िकर हाज़िर ।।

—हाली

४१

दुनिया में अब उन्हींके तईं कहिये पादशाह ।
जिनके बदन दुरुस्त हैं दिन-रात सालो-माह ।।
जिस पास तन्दुरुस्ती व हुर्मत[1] की हो सिपाह ।
ऐसी फिर और कौन-सी दौलत है वाह-वाह ।।
जितने सख़ुन हैं सबमें यही है सख़ुन दुरुस्त ।
अल्लाह आबरू से रक्खे और तन्दुरुस्त ।।

—नज़ीर

४२

आबरू दुनिया में यारो मोती की-सी आब है ।
तन्दुरुस्ती और भी फिर ऐश का असबाब है ।।
जिस कने हैं यह उसीका सब अदब आदाब है ।
यह रहें और ज़िन्दगी तो फिर ख़याला ख़्वाब है ।।
तन्दुरुस्ती को निपट फ़ज़ले-इलाही[2] बूझिये ।
आबरू से जग में रहना पादशाही बूझिये ।।

—नज़ीर

४३

गुज़र गये हैं जो दिन फिर न आयेंगे हरगिज़ ।
कि एक चाल फ़लक[3] हर बरस नहीं चलता ।।

—दाग़

१. इज्जत । २. ईश्वर की कृपा । ३. आस्मान ।

४४

फ़िलासफ़ी के मुकालमों में,
किसीने यह ख़ूब ही कहा है।
जो तनदुरुस्ती हो तेरी अच्छी,
तो सांस ही में बड़ा मज़ा है।। —अकबर

४५

जो किसीकी अदा पै फ़िदा न हुआ,
जो किसीकी अदा पै फ़िदा न रहा।
वह जिगर ही नहीं, वह तो दिल ही नहीं,
वह रहे न रहे, वह रहा न रहा।।
मेरे ज़ेहन में है मेरे होश में है,
मेरी अक्ल में है मेरी याद में है।
वह अलग भी हुआ तो अलग न रहा,
वह जुदा भी हुआ तो जुदा न रहा।।
जो वह ग़म न रहा तो वह दिल न रहा,
जो वह दिल न रहा तो वह हम न रहे।
जो वह हम न रहे तो वह तुम न रहे,
जो वह तुम न रहे तो मज़ा न रहा।।
—अज्ञात

४६

क्यों सताते हो दिले बेजुर्म को,
ज़ालिमो! है ये ज़माना चन्द रोज़। —नज़ीर

४७

रास्ता मुल्केअदम[1] का है बनाया क्या साफ़।
मूंदकर आंखें चले जाते हैं जानेवाले।।

---

१. यमलोक।

४८

चिराग़-सुबह[1] यह कहता है आफ़ताब को देख।
यह बज़्म तुमको मुबारक हो हम तो चलते हैं॥

—ज़ौक

४९

दिखा न जोशो-ख़रोश[2] इतना ज़ोर पर चढ़कर।
गये जहान में दरिया बहुत उतर चढ़कर॥

—ज़ौक

५०

कह रहा है आसमां यह सब समां कुछ भी नहीं।
पीस दूंगा एक गर्दिश में जहां कुछ भी नहीं॥
जिनके महलों पर हज़ारों रंग के फ़ानूस थे।
झाड़ उनकी क़ब्र पर है औ' निशां कुछ भी नहीं॥

—बहादुरशाह 'ज़फर'

५१

कली कोई जहाँ पर खिल रही थी।
वहीं एक फूल भी मुरझा रहा था॥

—जिगर

५२

ईद और नौरोज़ हैं सब दिल के साथ।
दिल नहीं हाज़िर तो दुनिया है उजाड़॥

—हाली

५३

सुबह को देखते ही भूल गये शाम को हम।

—आतिश

१. प्रभात का दीपक। २. आवेश।

५४

सिवाय नाम के बाकी असर निशां से न थे।
ज़मीं से दब गये झुकते जो आस्मां से न थे॥

—आतिश

५५

जिन्दगी अपनी जो इस ढंग से गुज़री ग़ालिब।
हम भी क्या याद करेंगे कि ख़ुदा रखते थे॥

—ग़ालिब

५६

मौत जबतक नज़र नहीं आती।
ज़िन्दगी राह पर नहीं आती॥

—जिगर

५७

हमारा देखिये क्या हाल हो,
जब तक बहार आवे।

—मज़हर

५८

वाये[1] नादानी कि बाद अज़ मर्ग[2] यह साबित हुआ।
ख़्वाब था जो-कुछ कि देखा जो सुना अफ़साना था॥

—दर्द

५९

ज़िन्दगी और इस ज़माने में।
ऐसे जीने का कुछ मज़ा भी है॥

—दाग़

[1] हाय। [2] मृत्यु।

६०

जब सालगिरह हुई तो उक़्दा[1] ये खुला।
यां और गिरह से यक बरस जाता है॥

—अज्ञात

६१

दोस्तो ! देखो तमाशा यां का बस।
तुम रहो अब हम तो अपने घर चले॥

—अज्ञात

६२

वो क्या चीज़ है आह ! जिसके लिए।
हरेक चीज़ से हाथ उठाकर चले॥

—अज्ञात

६३

गो रैफ़ल अपना काम करता है।
शेर भी मौत ही से मरता है॥

—अकबर

६४

करेगा क़द्र जो दुनिया में अपने आने की।
उसीकी जान को लज़्ज़त मिलेगी जाने की॥

—अकबर

६५

हिचकी का तार टूट चुका, रूह अब कहां !
ज़ंजीर खुल के गिर पड़ी, दीवाना छुट गया॥

—अज़ीज़

---

[1] रहस्य।

६६

होशो हवास ताबो तवाँ[1] दाग़ जा चुके।
अब हम भी जानेवाले हैं सामान तो गया।।

—दाग़

६७

मग़रूर न हो तलवारों पर,
मत भूल भरोसे ढालों के।
सब पट्टा तोड़ के भागेंगे,
मुंह देख अजल[2] के भालों के।।
क्या डब्बे मोती-हीरों के,
क्या ढेर खजाने मालों के।
क्या बगुचे ताश[3] मुशज्जर[4] के,
क्या तख़्ते शाल-दुशालों के।।
सब ठाट पड़ा रह जावेगा,
जब लाद चलेगा बनजारा।

—नज़ीर

६८

मशहूर हकीम औ बैद हुए,
या पढ़कर इल्म तबाबत का।
दालान किताबों से रोका,
औ नुस्खों से सन्दूक भरा।।
जब मौत मरज़ ने आन लिया,
सब भूले नब्ज़ औ' क़ारूरा।
गो नुस्खे लाख मुजर्रब[5] थे,

---

[1]शक्ति-सामर्थ्य ; [2]मौत ; [3]एक प्रकार का जरदोजी कपड़ा ;
[4]बूटेदार ; [5]अनुभूत।

पर काम न आया इक नुस्खा ।।
सब जीते जी के झगड़े हैं,
सच पूछो तो क्या खाक हुए ।
जब मौत से आकर काम पड़ा,
सब क़िस्से क़ज़िये पाक[1] हुए ।।

—नज़ीर

६९

दुनिया में अपना जी कोई बहला के मर गया ।
दिलतंगियों से औ' कोई उकता के मर गया ।।
आक़िल था वह तो आपको समझाके मर गया ।
बेअक़्ल छाती पीटके घबराके मर गया ।।
दुख पाके मर गया कोई सुख पाके मर गया ।
जीता रहा न कोई हर इक आके मर गया ।।

—नज़ीर

७०

मह अस्प[2] बहुत उछला-कूदा,
अब कोड़ा मारो ज़ेर करो ।
तब माल इकट्ठा करते थे,
अब तन का अपने ढेर करो ।।
गढ़ टूटा लश्कर भाग चुका,
अब म्यान में तुम शमशेर करो ।
तुम साफ़ लड़ाई हार चुके,
अब भगने में मत देर करो ।।
तन सूखा कुबड़ी पीठ हुई,
घोड़े पर ज़ीन धरो बाबा ।

[1] झगड़े-झंझट का अन्त होना । [2] घोड़ा ।

अब मौत नक़ारा बाज चुका,
चलने की फ़िक्र करो बाबा ।।

—नज़ीर

७१

जितनी बढ़ती है, उतनी घटती है ।
ज़िन्दगी आप ही आप कटती है ।।

—दर्द

७२

मौत से बदतर बुढापा आयगा ।
जान से अच्छी जवानी जायगी ।।

—दाग़

७३

ज़िन्दगी मौत की मानिन्द गुज़ारी मैंने ।

—अज्ञात

७४

जो देखी हिस्टरी इस बात पर कामिल[1] यक़ीं आया ।
उसे जीना नहीं आया जिसे मरना नहीं आया ।।

—अकबर

७५

अपने को लाजवाब देखा है,
सबको खानाखराब[2] देखा है ।
जागने पर हुआ मगर मालूम,
जो भी देखा है ख़्वाब देखा है ।।

[1] पूरा । [2] बेघरबार ।

७६

'सम्मन' किसको रोइये, हँसिये कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं, रहे सो जावनहार॥

७७

मान ले कहना मेरा ऐ जान हँस ले बोल ले।
हुस्न यह दो दिन का है मेहमान हँस ले बोल ले॥

—नज़ीर

७८

लो यारो हम अब जावेंगे कल अपने वतन को।
अब तुमको मुबारक रहे ये पेड़ तुम्हारा॥

—नज़ीर

७९

मौत आने के लिए है,
जान जाने के लिए। —दाग़

८०

जिनके हंगामों से थे आबाद बीराने कभी।
शहर उनके मिट गये आबादियां बन हो गईं॥

—इकबाल

८१

यह सोचते ही रहे और बहार ख़त्म हुई।
कहाँ चमन में नशेमन बने, कहां न बने॥

—असर

८२

दरिया की ज़िन्दगी पर सदके[1] हज़ार जानें।
मुझको नहीं गवारा साहिल की मौत मरना॥ —जिगर

[1] कुरबान।

८३

गुज़रा हुआ ज़माना ख़ारिज है ज़िन्दगी से।
क्यों याद कर रहा है, गुज़रा हुआ ज़माना॥

—असर

८४

बादेफ़ना[1] फ़िज़ूल है नामोनिशां की फ़िक्र।
जब हम नहीं रहे तो रहेगा मज़ार क्या॥

—चकबस्त

८५

ज़िन्दगी कुर्बानियों का नाम है। —असर

८६

वो जागते हैं जो दुनिया को ख़्वाब समझते हैं।

—अनीस

८७

पयम्बर[2] है शह[3] है कि दरवेश[4] है।
सभों को यही राह दरपेश है॥

८८

"मरने में तो कोई हर्ज नहीं है। लेकिन ऐसा हो कि उस समय एक स्नेह पूर्ण कर-स्पर्श उसके मस्तक तक पहुंचे और एक करुणार्द्र स्नेहपूर्ण मुंह देखते-देखते इस जीवन का अन्त हो। मरने के समय वह किसीकी आंखों का एक बूंद जल देखकर मर सके।"

—'देवदास' (शरत्)

८९

यह बात कुछ महत्व नहीं रखती कि आदमी मरता कैसे है, बल्कि यह महत्व की बात है कि वह जीता किस प्रकार है। —जॉनसन

[1]मरने के बाद। [2]अवतार। [3]सम्राट। [4]फ़कीर।

९०

वही सबसे अधिक जीता है, जो सबसे अधिक सोचता है, सुन्दरतम भावनाएं रखता है, सर्वोत्तम रीति से काम करता है।

—बेलो

९१

ज़िन्दगी आधी बीत चुकी होती है, जब हम सोचते हैं कि जिन्दगी क्या है ?

—फ्रेंच कहावत

९२

मृतक सीज़र जीवित सीज़र से अधिक शक्तिमान् है।

—शेक्सपियर

९३

दुनिया में मरना सबसे आसान और जीना सबसे कठिन काम है।

—अबुल कलाम आज़ाद

: १४ :

श्रम, उद्योग, आत्मोन्नति

१

न मृषा श्रान्तं यदवन्ति देवाः।

—ऋग्वेद

—यह सत्य ही है कि देवता उसीकी सहायता करते हैं, जो परिश्रम करता है।

२

इन्द्र इच्चरतः सखा।

—ऐतरेय ब्राह्मण

—ईश्वर उसीकी सहायता करता है, जो उद्योग करता है।

३

अनिर्वेदः श्रियोमूलं लाभस्य च शुभस्य च।
महान् भवत्यनिर्विण्णः सुखं चानन्त्यमश्नुते ।।

—महाभारत

—उद्योग में तत्पर रहना धन, लाभ और कल्याण का मूल है। इसलिए उद्योग न छोड़ने वाला मनुष्य महान् हो जाता है और अपरम्पार सुख भोगता है।

४

उत्थानं संयमो दाक्ष्यमप्रमादो धृतिः स्मृति।
समीक्ष्य च समारम्भो विद्धि मूलं भवस्य तु ।।

—महाभारत

—उद्योग, संयम, दक्षता, सावधानी, धैर्य, स्मृति और सोच-विचारकर कार्यारम्भ करना—इन्हें उन्नति का मूल समझिये।

५

प्रयोजनेषु ये सक्ता न विशेषेषु भारत।
तानहं पण्डितान् मन्ये विशेषाहि प्रसङ्गिनः ।।

—महाभारत

—जो लोग जितना आवश्यक है उतने ही काम में लगे रहते हैं, अधिक में हाथ नहीं डालते, उन्हें मैं पंडित मानता हूं; क्योंकि अधिक में हाथ डालना संघर्ष का कारण होता है।

६

बुद्धिश्रेष्ठानि कर्माणि बाहुमध्यानि भारत।
तानि जंघाजघन्यानि भारप्रत्यवराणि च ।।

—महाभारत

—बुद्धि से सोच-विचारकर किये जानेवाले कार्य उत्तम, बाहुबल से किये जानेवाले मध्यम श्रेणी के और जंघा से होने वाले काम अधम तथा भार ढोने का काम बहुत ही निकृष्ट है।

७

द्रव्यं यथा स्यात्कटुकं रसेन.
तच्चोपयुक्तं मधुरं विपाके ।
तथैव वीर्यं कटुकं श्रमेण,
तस्यार्थसिद्धयै मधुरो विपाकः ।।

— सौन्दरनन्द

—जिस प्रकार कोई वस्तु स्वाद में तो कड़वी लगती है, लेकिन पचने में मधुर हो जाती है, उसी प्रकार थकावट के कारण उद्योग कड़वा लगता है, लेकिन कार्य की सिद्धि होजाने पर उसका परिणाम बड़ा मीठा होता है ।

८

अलब्धस्यालाभो नियतमुपलब्धस्य विगम—
स्तथैवात्मावज्ञा कृपणमधिकेभ्यः परिभवः ।
तमोनिस्तेजस्त्वं श्रुतिनियमतुष्टिव्यु परमो ।
नृणां निर्वीर्याणां भवति विनिपातश्च भवति ।।

— सौन्दरनन्द

— निर्वीय, अनुद्योगी मनुष्यों को कभी अप्राप्त वस्तुओं की प्राप्ति नहीं होती; उनकी उपलब्ध वस्तुओं का भी विनाश हो जाता है । उनका आत्म सम्मान जाता रहता है, वे दीन-हीन हो जाते हैं, समर्थ पुरुषों से तिरस्कृत होते हैं, अन्धकार में पड़े रहते हैं; उनका तेज क्षीण हो जाता है, विद्या, संयम और सन्तोष नष्ट हो जाता है । सब प्रकार से उनका पतन ही होता है ।

९

नयं श्रुत्वा शक्तो यदयमभिवृद्धिं न लभते ।
परं धर्मं ज्ञात्वा यदुपरि निवासं न लभते ।।
गृहं त्यक्त्वा मुक्तौ यदयमुपशान्तिं न लभते ।
निमित्तं कौसीद्यं भवति पुरुषस्यात्र न रिपुः ।। —सौन्दरनन्द

—यदि शक्तिशाली मनुष्य उपाय सुनकर भी आत्मोन्नति नहीं करता, उत्तम धर्म को जानकर भी उत्तम पद नहीं प्राप्त करता और मुक्ति के लिए घर छोड़कर शान्ति-लाभ नहीं करता तो इसका कारण उसका अपना आलस्य ही है, न कि कोई बाहरी शत्रु।

१०

मृतास्त एवात्र यशो न येषां,
अन्धास्त एव श्रुति-वर्जिता ये।
ये दानशीला न नपुंसकास्ते
ये कर्मशीला न त एव शोच्याः ॥

—महाभारत

—जिन्होंने यश पाने का कोई काम नहीं किया, वे मरे हुए हैं। जिन्होंने विद्या नहीं प्राप्त की, वे अन्धे हैं, जो दानशील नहीं हैं, वे नपुंसक हैं और जो कर्मशील नहीं हैं, वे शोचनीय हैं।

११

उत्तिट्ठे नप्पमज्जेय धम्मं सुचरितं चरे।
धम्मचारी सुखं सेति अस्मिं लोके परम्हि च ॥

—धम्मपद

—मनुष्य को चाहिए कि वह उठे, आलसी न बने और धर्म के उत्तम सिद्धान्तों का अनुशीलन करे। धर्म का आचरण करनेवाला व्यक्ति इस लोक में और परलोक में भी सुख प्राप्त करता है।

१२

कांश्चिदर्थान्नरः प्राज्ञो लघुमूलान्महाफलान्।
क्षिप्रमारभते कर्तुं न विघ्नयति तादृशान् ॥

—महाभारत

—जिन कार्यों का मूल छोटा और फल महान् होता है, उन्हें बुद्धिमान् मनुष्य तत्काल आरम्भ कर देता है। ऐसे कार्यों में वह विघ्न नहीं आने देता।

१३

सुकरानि असाधूनि अत्तनो अहितानि च ।
यं वे हितं च साधुं च तं वे परम दुक्करं ।।

—धम्मपद

अशुभ एवं अपने लिए अहितकर कार्यों का करना सहज है, शुभ एवं हितकर कार्यों का करना परम कठिन है ।

१४

वह खुद अता[1] करे तो जहन्नुम[2] भी है बहिश्त[3] ।
मांगी हुई निजात[4] मेरे काम की नहीं ।।

१५

इस तरह तय हमने की हैं मंजिलें ।
गिर गये, गिरकर उठे, उठकर चले ।।

१६

गर जन्नतो जहीम नदीदी बेबीं के हस्त ।
शग़लो फ़राग़े जन्नते मा ओ जहीमे मा ।।

—सनाई

—तू ने नरक नहीं देखा है । समझ ले कि उद्यम स्वर्ग और आलस्य नरक है ।

१७

जब खाली रहो और कोई काम न हो तो अपना ही कपड़ा फाड़कर उसे सीओ ।

—फ़ारसी कहावत

१८

पांव नहीं ठहराय, चढ़ौं गिरि-गिरि परौं ।
फिरि-फिरि चढ़हुं सम्हारि चरन आगे धरौं ।। —कबीर

---

[1] दे ; [2] नरक ; [3] स्वर्ग ; [4] मुक्ति ।

१९

बांबी कूटे बावरे, सांप न मारा जाय।
मूरख बांबी ना डसै, सांप सबन को खाय।।

—कबीर

२०

काल्ह करै सो आज कर,
सबहिं साज तेरे साथ।
काल्ह-काल्ह तू क्या करै,
काल्ह काल के हाथ।।

—कबीर

२१

प्राप्त हुई जिसको कि समस्त,
श्रमार्जित सद्‌गति श्री प्रमुदा है।
दुर्लभ है न उसे कुछ भी
जिसकी गुणराशि स्वयं मधुदा है।।
भाग्य-विभूति, महाकुल की निधि
भी प्रतिभामुख को अणुदा है।
सिद्ध हुआ जिसका पुरुषार्थ
सदैव उसे वसुदा वसुदा है।।

—अंगराज

२२

आत्मोन्नति ही हर प्रकार की बीमारी की औषधि है। यही है अमृत, जो मृत्यु का एकमात्र उपाय है।

—विवेकानन्द

२३

परिवर्तन अनिवार्य है। वह उन्नति के लिए है या अवनति के लिए—यह तो हमारे ऊपर निर्भर है।

—रस्किन

२४

न चूक वक्त को पाकर कि है यह वह माशूक।
कभी उमीद नहीं जिसके जाके आने की।।

—अमीर

२५

"हे धरित्री ! तू इतनी कृपण किसलिए है ? हम कितना प्रयास करते हैं, तब जाकर कहीं धान्य प्राप्त कर पाते हैं। यदि तुझे देना ही है तो प्रसन्न होकर हँस-हँसकर प्रदान कर। हमारे माथे का पसीना एड़ी तक क्यों लाती है ? बिना खोदे धान्य देने में तेरा क्या जाता है ?"

मन्द-मन्द मुसकराकर धरित्री ने कहा—"ऐसा करने पर मेरा गौरव तो ज़रा बढ़ जायगा, पर तेरा गौरव सदा के लिए जाता रहेगा।"

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

२६

जो अपने हिस्से का काम किये बिना ही भोजन चाहते हैं, वे चोर हैं।

—महात्मा गांधी

२७

आदमी जितना खाता है, उससे अधिक पैदा करने की ताक़त ईश्वर ने उसे दी है।

—महात्मा गांधी

२८

एक आदमी निठल्ला रहेगा तो दूसरे को दुगना काम करना पड़ेगा।

—महात्मा गांधी

२९

मेहनत सारे भेद-भावों को दूर करने का साधन है। वह सबको एक सतह पर लाती है। मेहनत पूंजी से बड़ी है।

—महात्मा गांधी

: १५ :

बल, पौरुष, पराक्रम

१

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः ।

—मुंडकोपनिषद्

—बलहीन मनुष्य आत्मा को प्राप्त नहीं कर सकता ।

२

ब्रह्म च क्षत्रं च संश्रिते ।

—ऐतरेय ब्राह्मण

—बुद्धिबल और बाहुबल परस्पर एक-दूसरे के आश्रित रहते हैं ।

३

द्वितीयवान् हि वीर्यवान् ।

—शतपथ ब्राह्मण

—जिसका साथी है, वही बलवान् होता है ।

४

विशा वा क्षत्रियो बलवान् भवति ।

—शतपथ ब्राह्मण

—राजा प्रजा से ही बलवान् होता है ।

५

बुद्धिर्यस्य बलं तस्य ।

—पंचतन्त्र

—जिसके पास बुद्धि है, उसीके पास बल है ।

६

क्षत्रं दूणाशं अजरम् ।

—ऋग्वेद

—क्षात्रतेज नष्ट न हो, निरन्तर बढ़ता ही जाय ।

७

अन्धं बलं जडं प्राहुः प्रणेतव्यं विचक्षणैः ।

—महाभारत

—बल अन्धा और जड़ है, बुद्धिमानों को चाहिए कि उसे मार्ग दिखलावें ।

८

न श्रेयः सततं तेजो न नित्यं श्रेयसी क्षमा ।

—महाभारत

—सदैव तेज प्रकट करना अथवा क्षमा करना श्रेयस्कर नहीं होता ।

९

अंगनवेदी वसुधा कुल्या जलधिः स्थली च पातालम्
वल्मीकश्च सुमेरुः कृतप्रतिज्ञस्य वीरस्य ।

—हर्ष-चरित

—दृढ़ प्रतिज्ञ वीर के लिए समस्त संसार घर के समान, समुद्र एक क्षुद्र नदी के सामान, पाताल स्थल के समान और सुमेरु पर्वत दीमक के घरौंदे के समान होता है ।

१०

सर्वैरपि गुणैर्युक्तो निर्वीर्यः किं करिष्यति ।
गुणीभूता गुणाः सर्वे तिष्ठन्ति हि पराक्रमे ।।

जो निर्बल है, वह सर्वगुण सम्पन्न होकर भी क्या करेगा ? पराक्रम में सभी गुण उसके अंग बनकर रहते हैं ।

११

काममपि प्रियानपि प्राणान् विमुञ्चति मनस्विनः ।
इच्छन्ति नत्वमित्रेभ्यो महतीमपि सत्क्रियाम् ।।

—मनस्वीजन अपने प्रिय प्राणों को भी सहर्ष त्याग देते हैं, किन्तु शत्रुओं से मिलनेवाले आदर-सत्कार की कभी आकांक्षा नहीं करते ।

१२

विपक्षः श्रीकण्ठो जडतनुरमात्यः शशधरो।
वसन्तः सामन्तः कुसुममिषवः सैन्यमबलाः॥
तथापि त्रैलोक्यं जयति मदनो देहरहितः।
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे॥

—शंकर विरोधी हैं, मंत्री जल-स्वरूपी चन्द्रमा और सामन्त बसन्त ऋतु है, बाण पुष्पों के और सेना अबलाओं की है। इस परिस्थिति में भी शरीर-रहित कामदेव तीनों लोकों को जीते हैं। महापुरुषों की कार्य-सिद्धि आत्मबल पर निर्भर रहती है, बाहरी साधनों पर नहीं।

१३

अङ्काधिरोपितमृगश्चन्द्रमा मृगलाञ्छनः।
केसरी निष्ठुरक्षिप्त मृगयूथो मृगाधिपः॥

—शिशुपाल-वध

—मृग को अपनी गोद में बैठानेवाला चन्द्रमा मृगलाञ्छन कहलाता है, लेकिन मृगों के समूह को निष्ठुरतापूर्वक मारनेवाला सिंह मृगाधिप कहा जाता है। तात्पर्य यह है कि शत्रुओं के प्रति मृदु व्यवहार अनादर का और पौरुष-पराक्रम मान-प्रतिष्ठा का कारण होता है।

१४

तुल्येऽपराधे स्वर्भानुर्भानुमन्तं चिरेण यत्।
हिमांशुमाशुग्रसते तन्म्रदिम्नः स्फुटं फलम्॥

—शिशुपाल-वध

—सूर्य, चन्द्र दोनों राहु के प्रति एक-से अपराधी हैं, लेकिन वह सूर्य को तो बहुत दिनों पर और चन्द्रमा को जल्दी-जल्दी ग्रसता है। इसका कारण केवल चन्द्रमा की मृदुता ही है।

१५

मनस्वी म्रियते कामं कार्पण्यं न तु गच्छति।
अपि निर्वाणमायाति नानलो याति शीतताम्॥

—मनस्वीजन सहर्ष प्राण त्याग देते हैं किन्तु दीनता नहीं दिखाते। जैसे, आग चाहे बुझ जाय, पर शीतल नहीं होती।

१६

सुनहु सखा, कह कृपानिधाना।
जेहि जय होइ सो स्यन्दन आना।।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।।
बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।।
ईस भजन सारथी सुजाना।
बिरति चर्म सन्तोष कृपाना।।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचण्डा।
बर बिग्यान कठिन कोदण्डा।।
अमल अचल मन त्रोन समाना।
सम जम नियम सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद विप्र-गुरु-पूजा।
एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।
सखा धर्ममय अस रथ जाके।
जीतन कहं न कतहुं रिपु ताके।।
महा अजय संसार-रिपु,
जीति सकइ सो बीर।
जाके अस रथ होइ दृढ़,
सुनहु सखा मतिधीर।।

—रामचरित-मानस

१७

समरथ को नहिं दोष गुसाईं।

—तुलसी

१८

सूरा सो पहिचानिये, लरै जु दीन के हेत।
पुरजा-पुरजा कटि मरै, तबहुं न छांड़ै खेत ।।

—कबीर

१९

कह कबीर अस उद्यम कीजै।
आप जिमैं औरन को दीजै ।।

—कबीर

२०

लोहे की न लुहार की, रहिमन कही विचार।
जो हनि मारै सीस में, ताही की तलवार।।

—रहीम

२१

रहिमन सांचे सूर की,
बैरिहुं करैं बखान।

—रहीम

२२

सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय।
पवन जगावत आगि को, दीपहिं देत बुझाय ।।

—वृन्द

२३

सिंह नाम शस्त्री जब पैहैं।
सान बीररस की चढ़ जैहैं ।।

—गुरु गोविन्दसिंह

२४

बढ़ जाता है मान वीर का,
रण में बलि होने से।

ज्यों सोने की भस्म क़ीमती,
होती है सोने से ॥

—सुभद्राकुमारी चौहान

२५

मानी के मस्तक उठकर फिर क्या झुकते हैं !
पथ-बाधा से कहीं वीर के पद रुकते हैं ?
कठिन मार्ग हो भले, हमें तो चलना ही है।
रात बड़ी हो, किन्तु दीप को जलना ही है ॥
जाना है हमको उसी
कर्मभूमि में मान से।
जीवन है मिलता जहां
प्राणों के बलिदान से ॥

—अंगराज

२६

न शाखे गुल ही ऊंची है, न दीवारे चमन बुलबुल !
तेरी हिम्मत की कोताही, तेरी क़िस्मत की पस्ती है ॥

—अमीर

२७

बलन्दी को बलन्दी जानना, हिम्मत की पस्ती है।

—अमीर

२८

आन में फ़र्क न आने दीजिये।
जान अगर जाये तो जाने दीजिये ॥

—नसीम

२९

पूरे हैं वही मर्द जो हर हाल में खुश हैं।

—नजीर

३०

राजपूतों का इतिहास पढ़कर सीखो कि वीरों का एक भी वचन मिथ्या नहीं जाता। वीरता बातें कहने में नहीं, किन्तु उन्हें मिथ्या नहीं जाने देने में है।

—महात्मा गांधी

३१

मैं कायरता तो किसी हालत में सहन नहीं कर सकता। मेरे गुज़र जाने के बाद कोई यह न कहने पाये कि गांधी ने लोगों को नामर्द बनना सिखाया। अगर आप सोचते हों कि मेरी अहिंसा कायरता के बराबर है या उससे कायरता ही पैदा होगी तो आपको उसे छोड़ देने में ज़रा भी हिचकना नहीं चाहिए। आप निपट कायरता से मरें, इसकी अपेक्षा आपका बहादुरी से प्रहार खाते हुए मरना मैं कहीं बेहतर समझूंगा।

—महात्मा गांधी

३२

किसी विशाल वाहिनी के नायक को छीना जा सकता है, पर किसी ग़रीब आदमी से उसकी दृढ़ता को नहीं छीना जा सकता।

—कनफ्यूशस

: १६ :

अन्न

१

अन्नं वै विशः

—शतपथ ब्राह्मण

—अन्न ही प्रजा का आधार है।

२

अन्नेन हीदं सर्वं गृहीतम्। तस्माद् यावन्तो नोऽशनमश्नन्ति ते नः सर्वे गृहीता भवन्ति। ऐषैव स्थितिः। —शतपथ ब्राह्मण

—अन्न ने सबको पकड़ रक्खा है। इसलिए जो भी हमारे यहां भोजन करते हैं, वे हमारे हो जाते हैं। यही वस्तुस्थिति है।

३

अन्नं वै प्रजापतिः।

—प्रश्नोपनिषद्

—अन्न ही प्रजापति है।

४

सर्वारम्भाः तण्डुलप्रस्थमूलाः।

—महाभारत

—जितने भी उद्योग हैं, सबके मूल में थोड़े-से चावल का ही बल है।

५

अन्नाद् भवन्ति भूतानि म्रियन्तेतदभावतः।

—महाभारत

—अन्न ही से प्राणी उत्पन्न होते हैं और अन्न का अभाव होने पर मर जाते हैं।

६

अन्नमूलं बलं पुंसा बलमूलं हि जीवनम्।

—सुश्रुत

—आहार ही बल का प्रमुख आधार है और जीवन बलाधीन है।

७

रोटी न पेट में हो तो फिर कुछ जतन न हो।
मेले की सैर ख़ाहिशे बाग़ो चमन न हो॥
भूखे ग़रीब दिल की ख़ुदा से लगन न हो।
सच है कहा किसीने कि भूखे भजन न हो॥
अल्लाह को भी याद दिलाती हैं रोटियां॥
कपड़े किसीके लाल हैं रोटी के वास्ते।
लम्बे किसीके बाल हैं रोटी के वास्ते॥

बांधे कोई रुमाल है रोटी के वास्ते।
सब कश्फ़ औ कमाल हैं रोटी के वास्ते॥
जितने हैं रूप सब यह दिखाती हैं रोटियां॥
रोटी से नाचें प्यादा क़वायद दिखा-दिखा।
असवार नाचें घोड़े क़ो काबा लगा-लगा।
घुंघरू को बांधे पीक भी फिरता है नाचता।
और इस सिवा जो ग़ौर से देखा तो जाबजा॥
सौ-सौ तरह की नाच दिखाती हैं रोटियां॥

—नज़ीर

८

इन रोटियों के नूर से सब दिल है बूर-बूर।
आटा नहीं है, छलनी से छन-छन गिरे है नूर॥
हरगिज़ किसी तरह न बुझे पेट का तन्दूर।
इस आग को मगर ये बुझाती हैं रोटियां॥

—नज़ीर

९

जो लोग भूखों मर रहे हैं और बेकार हैं, उनका परमेश्वर तो योग्य काम और उससे मिलनेवाला अनाज ही है।

—महात्मा गांधी

१०

यदि रोटी हो तो सभी दुःख झेले जा सकते हैं।

—कर्वेन्टीज़

११

जैसा अन्न-जल खाइये, तैसा ही मन होय।
जैसा पानी पीजिये, तैसी बानी सोय॥

—कबीर

: १७ :

धन

१

दुन्दुभिस्तुसुतरामचेतन
स्तन्मुखादपि धनन्धनन्धनम्
इत्थमेव निनदः प्रवर्त्तते,
किं पुनर्यदिजनः सचेतनः ॥

—अचेतन चर्म का मृदंग भी जब बोलता है तो धन-धन का ही शब्द करता है, फिर चैतन्य पुरुष ऐसा कहे तो क्या आश्चर्य है !

२

न नरस्य नरो दासो,
दासश्चार्थस्य भूपते ।

—महाभारत

—हे महाराज ! मनुष्य मनुष्य का दास नहीं, धन का दास है ।

३

यश्चात्मनि प्रार्थयते न किञ्चित्,
यश्चस्वभावोपहतान्तरात्मा ।
तेष्वल्पसन्तोषपरेषु नित्यम्
नरेषु नाहं निवसामि सम्यक् ॥

—महाभारत

—लक्ष्मी कहती है कि जो अपनी उन्नति के लिए कुछ भी प्रयत्न नहीं करते, जो जिस अवस्था में हैं उसीमें स्वभावतः पड़े रहना चाहते हैं, जो थोड़ी-सी वस्तु पाकर उसीसे सन्तुष्ट हो जाते हैं उनके पास मैं सदा भली-भांति नहीं रहती।

४

न चातिगुणवत्स्वेषा नात्यन्तं निर्गुणेषु च।
नैषा गुणान् कामयते नैर्गुण्यान्नानुरज्यते।
उन्मत्ता गौरिवान्धा श्रीः क्वचिदेवावतिष्ठते॥

—महाभारत

—लक्ष्मी न तो अत्यन्त गुणवानों के पास रहती है और न बहुत गुण-हीनों के पास। यह न तो बहुत-से गुणों को चाहती है और न निर्गुण के प्रति ही अनुरक्त होती है। उन्मत्त गौ की तरह अन्धी लक्ष्मी कहीं-कहीं ही ठहरती है।

५

दुःखार्तेषु प्रमत्तेषु नास्तिकेष्वलसेषु च।
न श्रीर्वसत्यदान्तेषु ये चोत्साहविवर्जिताः॥

—महाभारत

—जो दुःख से पीड़ित, प्रमादी, नास्तिक, आलसी, असंयमी और उत्साहहीन होते हैं, उनके यहां लक्ष्मी का वास नहीं होता।

६

अतिक्लेशेन योऽर्थाः स्युर्धर्मस्यातिक्रमेण वा।
अरेर्वा प्रणिपातेन मा स्म तेषु मनः कृथाः॥

—महाभारत

—जो धन अत्यन्त क्लेश उठाने से, धर्म का उल्लंघन करने से या शत्रु के सामने मस्तक झुकाने से मिले, उसमें मन न लगाइए।

७

अर्थेनहिवियुक्तस्य पुरुषस्याल्पतेजसः।
व्युच्छिद्यन्ते क्रियाः सर्वा ग्रीष्मे कुसरिता यथा॥

—जिसके पास धन नहीं होता, उस मनुष्य का तेज घट जाता है। उस समय उसकी सभी क्रियाएं उसी प्रकार नष्ट हो जाती हैं, जैसे ग्रीष्म ऋतु में छोटी-मोटी नदियां।

८

न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।

—ऋग्वेद

—दूसरों से झगड़ा करनेवाला धन नहीं पाता ।

९

जब गुन को गाहक मिलै, तब गुन लाख बिकाय ।
जब गुन को गाहक नहीं, कौड़ी बदले जाय ।।

—कबीर

१०

कौन कौ को है विपत्ति परे पर,
सम्पति में सबको सब कोऊ ।

—अज्ञात

११

विविध बणाय बणाव, जुगत धणी रचियो जगत ।
कीधो बसतन काय, रुपिया सिरखी राजिया ।।

—राजिया

—ईश्वर ने बड़ी चतुराई और विविधता के साथ इस संसार को बनाया है, किन्तु रुपये-जैसी कोई वस्तु वह नहीं बना सका ।

१२

बगैर कौड़ी के इन्सान की कीमत कौड़ी के बराबर भी नहीं होती ।

—शेखसादी

१३

द्रव्यवान् को न कृष्णपक्ष में सुख है और न शुक्ल पक्ष में, क्योंकि काली रात चोरों को छिपाती है और उजियाली रात चोरी जाने लायक चीज़ों को प्रत्यक्ष कर देती है ।

—डा० जॉनसन

१४

बचाया धन कमाया ही है।

—अंगरेजी कहावत

१५

संसार में सबसे अधिक निर्धन मनुष्य वही है, जिसके पास धन के सिवा और कुछ नहीं…। धन तो तभी उत्तम कहा जायगा, जबकि धनी में उसका उपयोग करने की क्षमता हो।

—राकफ़ेलर

१६

आय-व्यय की पुस्तक रक्खो। तुम्हारी जो आय हो, उसमें अंकित करते जाओ और उसमें से जितना भी खर्च करो, उसके लिखने में संकोच मत करो। ऐसा करने से तुम पैसा बचा सकोगे और वह तुम्हारे लिए बहुत आवश्यक है।

—राकफ़ेलर

१७

धन को धारण कर रखने पर वह निधन का कारण बन जाता है। इसलिए धन को 'द्रव्य' बनना चाहिए। जब धन बहने लगता है, तभी वह द्रव्य बनता है। 'द्रव्य' बनाने पर धन धन्य बन जाता है।

—विनोबा भावे

१८

जब हुआ पैसे का ऐ दोस्तो आकर संजोग।
इशरतें पास हुईं, दूर हुये मन के रोग॥
खोये जब माल, पिये दूध-दही, मोहनभोग।
दिल को आनन्द हुआ भाग गये सारे रोग॥

—नज़ीर

१६

कौड़ी बगैर सोते थे खाली ज़मीन पर।
कौड़ी हुई तो रहने लग शहनशीन[1] पर॥
पटके सुनहरे बंध गये जामों के चीन पर।
मोती के गुच्छे लग गये घोड़ों के ज़ीन पर॥
कौड़ी के सब जहान में नक्शोनगीन हैं।
कौड़ी न हो तो कौड़ी के फिर तीन तीन हैं॥

—नज़ीर

२०

पैसा ही बस बनाता है इन्सां की बात को।
पैसा ही ज़ेब देता है ब्याहो-बरात को॥
भाई सगा भी आन के पूछे न बात को।
बिन पैसे यारो दुलहा बने आधीरात को॥
पैसा है रंग रूप पैसा ही माल है।
पैसा न हो तो आदमी चर्खे का माल है॥

—नज़ीर

: १७ :

हर्ष-विषाद

१

पूर्वे वयसि तत् कुर्याद् येन वृद्धः सुखं वसेत्।
यावज्जीवेन तत् कुर्याद् येन प्रेत्य सुखं वसेत्॥

—महाभारत

---

[1] शाही तख़्त

—जीवन के प्रथम भाग में वह काम करे, जिससे वृद्धावस्था में सुखपूर्वक रह सके और जीवनभर वह कार्य करे, जिससे मरने के बाद भी सुख से रह सके।

२

गुणवदगुणवद्वा कुर्वता कार्यजातं,
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन।
अतिरभसकृतानां कर्मणामाविपत्ते—
र्भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः॥

—भर्तृहरि

—बुद्धिमान् को उचित है कि अच्छा या बुरा काम करने से पहले खूब सोच-विचारकर उसके परिणाम को समझ ले। जो कार्य सहसा, बिना सोचे-विचारे किये जाते हैं, उनका परिणाम मर्मस्थल में प्रविष्ट कंटक की भांति हृदयदाही या जीवन-पर्य्यन्त घोर दुःख देनेवाला होता है।

३

येन खट्वा समारूढ़ः परितप्येत कर्मणा।
आदावेव न तत् कुर्यादध्रुवे जीविते सति॥

—महाभारत

—इस जीवन का कोई ठिकाना नहीं है। जिस कर्म के करने से अन्त में खाट पर बैठकर पछताना पड़े, उसे पहले से ही नहीं करना चाहिए।

४

सन्तोषं परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत्।
सन्तोषमूलं हि सुखं, दुःखमूलं विपर्ययः॥ —मनु

—सुख की इच्छा करनेवालों को चाहिए कि परम सन्तोष को धारण करें और अपने चित्त को वश में रक्खें, क्योंकि सन्तोष ही सुख का मूल है और असन्तोष ही दुःख की जड़ है।

५

स्त्रियं तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम् ।
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ।।

—मनु

—स्त्री यदि प्रसन्न रहे तो सारा कुल प्रसन्न रहता है। यदि वह दुःखी रहती है तो सबकुछ बुरा लगता है ।

६

पुनर्नरो म्रियते जायते च,
पुनर्नरो हीयते वर्धते च ।
पुनर्नरो याचति याच्यते च,
पुनर्नरः शोचति शोच्यते च ।।

—महाभारत

—मनुष्य बार-बार मरता और पैदा होता है, बार-बार क्षीण होता और बढ़ता है, बार-बार दूसरों से याचना करता है और दूसरे उससे याचना करते हैं, बार-बार वह दूसरों के लिए शोक करता है और दूसरे उसके लिए शोक करते हैं ।

७

सुखं च दुःखं च भवाभवौ च,
लाभालाभौ मरणं जीवितं च ।
पर्यायशः सर्वमेते स्पृशन्ति,
तस्माद् धीरो न च हृष्येन्न शोचेत् ।।

—महाभारत

—सुख-दुःख, उत्पत्ति-विनाश, हानि-लाभ, जीवन-मरण एक-एक करके सबको प्राप्त होते हैं; अतः धीर पुरुष को इनके लिए हर्ष और शोक नहीं करना चाहिए ।

८

विद्यानाधिगता कलंक-रहिता,
वित्तं च नोपार्जितं।
शुश्रूषापि समाहितेन मनसा,
पित्रोर्न सम्पादिता ।।
आलोलायतलोचनाः प्रियतमाः
स्वप्नपेऽपि नालिङ्गिताः।
कालोऽयं परपिण्डलोलुपतया,
काकैरिव प्रेयर्ते ।।

—वैराग्यशतक

—विमल विद्या नहीं पढ़ी, धन नहीं कमाया, दत्तचित्त होकर माता-पिता की सेवा नहीं की और चंचल एवं विशाल नेत्रोंवाली स्त्रियों को स्वप्न में भी गले से नहीं लगाया; बस, कौवे की तरह पराये अन्न के लोभ में सारा समय योंही बिता दिया।

९

न भिक्षा दुर्भिक्षे पतित दुरवस्थाः कथमृणं।
लभन्ते कर्माणि द्विजपरिवृढान् कारयति कः ।।
अदत्त्वैव ग्रासं ग्रहपतिरसावस्तमयते।
क्व यामः किं कुर्मो गृहिणि, गहनो जीवनविधिः। **—माघ**

—इस दुर्भिक्ष के समय न तो भिक्षा मिल सकती है और न कहीं ऋण ही मिलेगा। ब्राह्मण कुल से कोई दास का काम भी न करायेगा। एक ग्रास दिये बिना सूर्य भी अस्त हो गये! हे प्रिये! अब कहां चलें, क्या करें! जीवन-यापन भी बड़ा कठिन हो गया है।

१०

असाधुभ्योऽस्य न भयं न चोरेभ्यो न राजतः।
अकिंचित्कस्यचित् कुर्वन्निर्भयः शुचिरावसेत् ।।

—महाभारत

—जो किसीका कुछ भी अहित नहीं करता, उसे न दुष्टों से भय होता है और न राजा से ही। वह परम पवित्र और निर्भय होकर जीवन व्यतीत करता है।

११

वासुदेव ! जरा कष्टं कष्टं निर्धनजीवनम्।
पुत्रशोको महाकष्टं कष्टात् कष्टतरम् क्षुधा ॥

—महाभारत

हे कृष्ण ! बुढ़ापा कष्टदायक है, दरिद्रता कष्टदायक है, पुत्र-शोक महाकष्टदायक है; किन्तु सबसे बड़ा कष्ट भूख है।

१२

आकाश मेरे लिए नक्षत्र है; पर शोक है, मेरे घर का छोटा-सा दीपक नहीं जला है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

१३

सूर्य के विदा होने पर यदि तुम आंसू बहाओगे तो तुम नक्षत्रों को भी न देख पाओगे।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

१४

काम की अधिकता नहीं, अनियमितता मनुष्य को मार डालती है।

—महात्मा गांधी

१५

बुझती हुई आग जैसे घी डालने से प्रज्वलित हो उठती है, वैसे ही सहानुभूति के दो शब्द पाकर मनुष्य की मुरझाई हुई आशा-लता लहलहा उठता है।

—गेटे

१६

मनुष्य कितना संवेदनशील है ! ज़रा किसीकी पीठ पर हाथ फेरकर देखिये, उसका दिमाग़ तुरन्त आसमान पर चढ़ने लगता है।

—जर्मन कहावत

१७

खाने को मोटा भोजन, पीने को शुद्ध जल और सिरहाने के लिए अपनी मुड़ी हुई बांह हो, ऐसी स्थिति में भी मनुष्य सुखी रह सकता है।

—कनफ्यूशस

१८

लोग नाना प्रकार के दुःख इसलिए भोग रहे हैं कि अधिकांश जन-समाज धर्महीन जीवन व्यतीत कर रहा है।

—टाल्स्टाय

१९

दुःख से दुखित होना दुःख को दूना करना है।

—शेक्सपियर

२०

हम अपने अतीत और भविष्य का चिन्तन करते हैं और जो हमारे पास नहीं है, उसके लिए निराश और दुखी होते हैं।

—शेली

२१

दूर से आये थे साक़ी सुन के मैखाने को हम।
बस तरसते ही चले अफ़सोस पैमाने को हम ।।

२२

क़िस्मत को देखिये कि कहां टूटी जा कमन्द।
दो-चार हाथ जबकि लबे बाम रह गया ।।

२३

मेरी क़िस्मत में ग़म गर इतना था ।
दिल भी या रब ! कई दिये होते ॥

२४

सुनते हैं ख़ुशी भी है ज़माने में कोई चीज़ ।
हम ढूंढ़ते फिरते हैं किधर है वोह कहां है ॥

—दाग़

२५

ईद औ नौरोज़ हैं सब दिल के साथ ।
दिल नहीं हाज़िर तो दुनिया है उजाड़ ॥

—हाली

२६

न इतराइये देर लगती है क्या,
ज़माने को करवट बदलते हुए ॥

—दाग़

२७

वोह जो उठते थे बिठाने के लिए ।
आज बैठे हैं उठाने के लिए ।

—अज्ञात

२८

फ़लक देता है जिनको ऐश,
उनको ग़म भी होते हैं ।
जहां बजते हैं नक्कारे,
वहां मातम भी होते हैं ॥　—दाग़

२९

शाम से ही बुझा-सा रहता है ।
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस का ॥　—मीर

३०

वाह क्या चीज़ ग़रीबुल्वतनी[1] होती है।
जाता हूं जहां छांव घनी होती है॥

—हफ़ीज़

३१

जाइये किस वास्ते ऐ दर्द मैख़ाने के बीच।
और ही मस्ती है अपने दिल के पैमाने के बीच॥

—दर्द

३२

बोझ सर से वह गिरा है कि उठाये न उठे।
काम वह आन पड़ा है कि बनाये न बने॥

—ग़ालिब

३३

जोकि क़िस्मत में जलना ही था शमा होते।
कि पूछे तो जाते किसी अंजुमन में॥

—सफ़ी

३४

लुत्फ़े बहार कुछ नहीं, गो है वही बहार।
दिल क्या उजड़ गया कि ज़माना उजड़ गया॥

—आरज़ू

३५

बागबां ने आग लगा दी जब आशियाने को मेरे।
जिनपे तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे॥

—साक़िब

[1]घर को छोड़कर परदेश में पड़े रहना।

३६

रहेंगे न मल्लाह ये दिन सदा।
कोई दिन में गंगा उतर जायगी॥

—हाली

३७

मेरे दिल में बर्छी चुभोकर कहा—
खबरदार! तूने अगर आह की॥

—दाग़

३८

नहीं उठने की ताक़त क्या करें? लाचार बैठे हैं।

—इंशा

३९

दिल दे तो इस मिज़ाज का परवरदिगार दे।
जो रंज की घड़ी भी खुशी से गुज़ार दे॥

—दाग़

४०

गुज़र गये हैं जो दिन फिर न आयेंगे हर्गिज़।
कि एक चाल फ़लक हर बरस नहीं चलता॥

—दाग़

४१

करें क्या कि दिल भी तो मजबूर है।
ज़मीं सख्त है आसमां दूर है॥

—मीर

४२

कहते हैं जीते हैं उम्मीद पै लोग।
हमको जीने की भी उम्मीद नहीं॥

—ग़ालिब

४३

गो हाथ को जुम्बिश नहीं, आंखों में तो दम है।
रहने दो अभी साग़रो मीना मेरे आगे॥

—ग़ालिब

४४

न किसीकी आंख का नूर हूं मैं,
न किसीके दिल का गुबार हूं।
जो उजड़ गया ओ नसीब हूं,
जो उतर गया ओ खुमार हूं॥

—ज़फ़र

४५

न मौजें न तूफ़ां न मांझी न साहिल।
मगर मन की नैया बही जा रही है॥

—सागर निज़ामी

४६

होता नहीं है कोई बुरे वक्त का शरीक[1]।
पत्ते भी भागते हैं खिज़ां में शजर[2] से दूर॥

४७

ज़मीने चमन गुल खिलाती है क्या-क्या!
बदलता है रंग आसमां कैसे-कैसे!!

—आतिश

४८

बहार में तो ज़मीं से बहार उबलती है।
जो मर्द है तो खिज़ां में बहार पैदा कर॥

—जोश

[1]साथी। [2]पेड़।

४९

नजीबों[1] का अजब कुछ हाल है इस दौर में यारो।
जहां पूछो यही कहते हैं—हम बेकार बैठे हैं॥

—इंशा

५०

राज़े दिल हैं पूछते और बोलने देते नहीं।
बात मुंह पै आ रही है, लब हिलाना है मना॥

—ज़िया

५१

कोई दुनिया से क्या भला मांगे।
वह तो बेचारी आप नंगी है।

—इंशा

५२

जो मुसीबत जो क़यामत आई।
सब इसी दिल की बदौलत आई॥ —जिगर

५३

नगर हो आबाद जिसके दिल का,
न पूछ उससे तू दुख हमारा।
यह दर्द सुन उस रईस से टुक,
जो लुटते देखे दयार[2] अपना॥

—सौदा

५४

'दर्द' अपने हाल से तुझे आगाह क्या करें।
जो सांस भी न ले सके वह आह क्या करें॥

—दर्द

---

[1] कुलीनों। [2] घर।

५५

आह का किसने असर देखा है।
हम भी एक अपनी हवा बांधते हैं।।

—ग़ालिब

५६

आई बहार कलियां फूलों की हँस रही हैं।
मैं इस अंधेरे घर में क़िस्मत को रो रहा हूं।।

५७

यह कहकर बाग़ से रुख़सत हुई बुलबुल कि या क़िस्मत।
लिखा यों था कि फ़स्ले गुल में छूटे आशियां अपना।।

—हज़ीं

५८

चले अब गुल के हाथों से लुटाकर कारवां अपना।
न छोड़ा हाय बुलबुल ने चमन में कुछ निशां अपना।
ये हसरत रह गई क्या-क्या मज़े से ज़िन्दगी करते।
अगर होता चमन अपना गुल अपना बाग़बां अपना।।

—मज़हर

५९

दिल का मरहम कोई न मिलिया,
जो मिलिया सो गरजी।
कहै कबीर आसमान ही फाटा,
क्योंकर सीवे दरजी।।

—कबीर

६०

संसार में किसका समय है एक-सा रहता सदा।
है निशि-दिवा-सी घूमती सर्वत्र विपदा-सम्पदा।।

जो आज एक अनाथ है नरनाथ कल होता वही।
जो आज उत्सव-मग्न है कल शोक से रोता वही॥

—मैथिलीशरण गुप्त

६१

मिला मोल का पता न जिनके वे अनमोल माल होते हैं।
मोद-कमल उपजानेवाले रस से भरे ताल होते हैं॥
बड़े भाग्यवालों के घर के मोती-भरे थाल होते हैं।
कितनी ही आंखों के तारे गोदी-भरे लाल होते हैं॥

—हरिऔध

: १९ :

शठ-शठता, मूर्ख-मूर्खता

१

निष्णातोऽपि च वेदान्ते साधुत्वं नैति दुर्जनः।
चिरं जलनिधौ मग्नो मैनाक इव मार्दवम्॥

—भामिनी-विलास

—सर्वथा समुद्र में डूबे रहने पर भी जिस प्रकार मैनाक पर्वत कोमलता को नहीं प्राप्त होता, उसी प्रकार दुर्जन मनुष्य वेद-पारंगत या परम विद्वान् होने पर भी साधुता को नहीं धारण करता।

२

कर्णामृतं सूक्तिरसं विमुच्य,
दोषे प्रयत्नः सुमहान् खलानाम्।
निरीक्षते केलिवनं प्रविष्टः,
क्रमेलकः कण्टकजालमेव॥

—बिल्हण

—दुष्ट लोग सुन्दर रसीली कविता को सुनकर भी उसके दोषों को ही खोजने में लगे रहते हैं। सुन्दर क्रीड़ा-कानन में जाने पर भी ऊँट

केवल कांटो को ही खोजता है।

३

शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक्,
छत्रेण सूर्यातपो ।
नागेन्द्रो निशिताङ्कुशेन समदो,
दण्डेन गौर्गर्दभः ॥
व्याधिर्भेषजसंग्रहेश्च विविधै—
र्मन्त्रैः प्रयोगैर्विषं ।
सर्वस्योषधमस्ति शास्त्रविहितं,
मूर्खस्य नास्त्यौषधम् ॥

—भर्तृहरि

—जल से अग्नि का, छाते से धूप का, पैने अंकुश से उन्मत्त हाथी का, डंडे से बैल-गधे का, नाना प्रकार की औषधियों से रोग का और मंत्र-प्रयोग से विष का निवारण हो सकता है। शास्त्र में सबकी औषधि का विधान है, लेकिन मूर्ख की कोई औषधि नहीं है।

४

गर्जति शरदि न वर्षति वर्षासु निस्वनो मेघः ।
नीचो वदति न कुरुते कुरुते न वदति सुजनः करोत्येव ॥

—बादल शरद ऋतु में गरजता है, पर बरसता नहीं, लेकिन वर्षा ऋतु में बिना गरजे ही बरसता है। नीच पुरुष केवल कहता है, करता नहीं; सत्पुरुष केवल करता है, कहता नहीं।

५

ऐश्वर्यमदमत्तानां क्षुधितानां च कामिनाम् ।
अहंकारविमूढानां विवेको नैव जायते ॥

—नारद-पुराण

—ऐश्वर्य के मद से उन्मत्त, क्षुधा-पीड़ित, कामी तथा अहंकार से विमूढ़ मनुष्यों में विवेक नहीं होता।

६

पढ़ब पढ़ाउब बेधत नाहीं,
बकि दिन रैन गंवाई।

—कबीर

७

मूरख से क्या बोलिये, सठ से कहा बसाय।
पाहन में क्या मारिये चोखा तीर नसाय।।

—कबीर

८

बैल गढ़न्ता नर गढ़ा, चूका सींग अरु पूंछ।

—कबीर

९

वे न यहां नागर बड़े, जिन आदर तो आब।
फूल्यो-अनफूल्यो भयो, गंवई गांव गुलाब।।

—बिहारी

१०

एक जो होय तो ज्ञान सिखाइये,
कूप ही में इहां भांग परी है।

—हरिश्चन्द्र

११

बुधि बिन करै बेपार दृष्टि बिन नाव चलावै।
सुर बिन गावै गीत, अर्थ बिन नाच नचावै।।
गुन बिन जाय बिदेस, अकल बिन चतुर कहावै।
बल बिन बांधै जुद्ध हौंस बिन हेत जनावै।।
अनइच्छा इच्छा करे,
अनदीठी बातां कहै।

बैताल कहै विक्रम सुनो,
यह मूरख की जात है ।।

—बैताल

१२

जो यह भी नहीं जानता कि वह कुछ नहीं जानता, वह सबसे बड़ा मूर्ख—मूर्ख-शिरोमणि है ।

—महात्मा गांधी

१३

मूर्खता सब कर लेगी, मगर बुद्धि का आदर कभी नहीं करेगी ।

—गेटे

१४

रत्न को खोकर उसके पात्र की रक्षा करने से भला क्या लाभ !

—भास

१५

मूर्ख सब जगह मिलेंगे, यहां तक कि पागलखानों में भी ।

—बर्नर्ड शॉ

१६

मुझे तबतक मूर्ख मत कहो जबतक ईश्वर मुझे सम्पत्ति न दे ।

—शेक्सपियर

१७

एक अकेला मूर्ख भी ऐसा प्रश्न कर सकता है, जिसका चालीस बुद्धिमान लोग मिलकर भी उत्तर नहीं दे सकते ।

—फ्रांसिसी कहावत

१८

कोई भी मूर्ख नियम बना सकता है, पर हर मूर्ख को वह नियम खलेगा ।

—थारो

१९

यदि कभी तुम मूर्ख नहीं रहे तो निश्चय जानो कि तुम कभी बुद्धिमान नहीं बन सकते ।

—थैकरे

२०

सबसे अधिक सन्ताप वह मूर्ख देता है, जिसके पास कुछ बुद्धि होती है ।

—ला राशे फोकाल्ड

२१

मूर्ख आदमी बहुत अधिक मांग करता है, पर जो उसकी मांग पूरी करता है, वह उससे भी बढ़कर मूर्ख होता है ।

—जर्मन कहावत

२२

बुद्धिमान् आदमी मूर्खों से इसकी अपेक्षा कहीं अधिक सीखते हैं, जितना कि मूर्ख बुद्धिमानों से सीखते हैं ।

—कैटो

२३

जवानी का नाम ही मूर्खता है, वयस्कता का नाम ही मूर्खताओं से संघर्ष है और बुढ़ापे का नाम ही मूर्खताओं पर पछतावा है ।

—डिज़रायली

२४

इस संसार के साथ सबसे बड़ी मुसीबत यह है कि मूर्खों को तो अपनी बात की सच्चाई का दृढ़ विश्वास होता है और बुद्धिमान् बराबर सन्देह में पड़े रहते हैं ।

—बरट्रैंड रसेल

२५

निरा विद्वान् निरा गधा होता है ।

—बर्टन

२६

राजनीति में आगे बढ़े हुए लोग प्राय: मूर्ख होते हैं।

—फ़ायड

: २० :

सामान्य नीति

१

धर्मं चरत माऽधर्मं, सत्यं वदत नाऽनृतम्।
दीर्घं पश्यत मा ह्रस्वं, परं पश्यत माऽपरम्॥

—वसिष्ठ

—धर्म के अनुसार आचरण करो, अधर्म के अनुसार नहीं, सत्य बोलो, मिथ्या नहीं।

दूर की बड़ी बात को भी देखो, केवल पास की छोटी बात को ही नहीं; मुख्य बात को भी देखो, केवल विशेष-विशेष 'अपर' बातों को ही नहीं।

२

जीर्णे भोजनमात्रेय: गौतम: प्राणिनां दया।
बृहस्पतिरविश्वास: भार्गव: स्त्रीषुमार्दवम्॥

—आत्रेय ऋषि का कहना है कि पहला भोजन पच जाने पर ही दूसरा भोजन करो। गौतम का कहना है कि प्राणियों पर दया करो। बृहस्पति का कहना है कि अत्यन्त विश्वास किसीपर न करो। शुक्राचार्य का कहना है कि स्त्रियों से सदा मृदुता का व्यवहार करो।

३

यस्य दानजितं मित्रं शत्रवो युधिनिर्जिता:।
अन्नपान जिता दारा: सफल: तस्य जीवितम्॥

—महाभारत

—जिसका मित्र दान के द्वारा वश में हो गया है, शत्रुगण युद्ध में जीत

लिये गये हैं, स्त्रियां खान-पान के द्वारा वशीभूत हैं, उसीका जीवन सफल है।

४

उत्तमानेव सेवेत प्राप्तकाले तु मध्यमान्।
अधमांस्तु न सेवेत य इच्छेद् भूतिमात्मनः ॥

—महाभारत

—जो अपना कल्याण चाहता है, वह श्रेष्ठ पुरुषों की सेवा करे; परिस्थिति के अनुसार आवश्यकता पड़ने पर मध्यम श्रेणी के मनुष्यों की भी सेवा कर ले, लेकिन अधम पुरुषों की सेवा न करे।

५

न परेसं विलोमानि न परेसं कताकतं।
अत्तानो व अवेक्खेय कतानि अकतानि च ॥ —धम्मपद

—मनुष्य को चाहिए कि वह न तो दूसरों के दोष देखे और न यह देखे कि दूसरे क्या करते और क्या नहीं करते। उसे अपने ही कृत-अकृत कर्मों को देखना चाहिए।

६

एकः सम्पन्नमश्नाति वस्ते वासश्च शोभनम्।
योऽसंविभज्य भृत्येभ्यः को नृशंसतरस्ततः ॥

—महाभारत

—जो अपने आश्रितों को बांटे बिना अकेले ही बढ़िया भोजन करता है और सुन्दर कपड़े पहनता है, उससे बढ़कर नृशंस कौन होगा ?

७

यदतप्तं प्रणमति न तत् सन्तापयन्त्यपि।
यच्च स्वयं नतं दारु न तत् संनमयन्त्यपि ॥
एतयोपमया धीरः संनमेत बलीयसे।
इन्द्राय स प्रणमते नमते यो बलीयसे ॥

—महाभारत

—जो धातु बिना गरम किये मुड़ जाते हैं, उन्हें आग में नहीं तपाते। जो काठ स्वयं झुका होता है, उसे कोई झुकाने का प्रयत्न नहीं करता। इस दृष्टान्त के अनुसार बुद्धिमान् मनुष्य को अपनेसे अधिक बलवान् के सामने झुक जाना चाहिए। जो अधिक बलवान् के सामने झुकता है, वह मानो इन्द्र को प्रणाम करता है।

८

यदि यस्यैव यद्दुःखं रक्ष्यं तस्यैव तन्मतम्।
पाददुःखं न हस्तस्य कस्मत्तत्तेन रक्ष्यते॥

—बोधिचर्य्यावतार

—यदि जिसको दुःख है, उसीको उसका निवारण करना चाहिए तो पैर को जो दुःख होता है, वह हाथ को नहीं होता, फिर भी हाथ क्यों उसका निवारण करता है ?

९

अपराधो न मेऽस्तीति नैतद्विश्वास कारणम्।
विद्यते हि नृशंसेभ्यो भयं गुणवतामपि॥

—मैंने कोई अपराध नहीं किया है, ऐसा समझकर निश्चिन्त नहीं रहना चाहिए, क्योंकि गुणवानों को भी दुष्टों से हमेशा ख़तरा रहता है।

१०

मुकुटे रोपितः काचः चरणाभरणे मणिः।
नहि दोषो मणेरस्ति किन्तु साधोरविज्ञता॥

—कांच को मुकुट में और मणि को नूपुर में लगाया जाय, तो इससे मणि का दोष नहीं, बल्कि लगानेवाले का अनाड़ीपन ही प्रकट होता है।

११

ऋणशेषाग्निशेषश्च शत्रुशेषस्तथैव च।
पुनश्च वर्द्धते यस्मात् तस्माच्छेषं न कारयेत्॥

—कर्ज़, आग और शत्रु, इनमें थोड़ा भी बाक़ी न रहने दे, क्योंकि यदि ये अल्पमात्र भी शेष रहते हैं, तो फिर बढ़ जाते हैं।

१२

योषितो नावमन्येत न चासां विश्वसेद् बुधः।
न चैवेर्ष्या भवेत्तासु न धिक्कुर्यात्कदाचन ॥

—विष्णु-पुराण

—बुद्धिमान पुरुष स्त्रियों का अपमान न करे और उनका विश्वास भी न करे तथा उनसे ईर्ष्या और उनका तिरस्कार भी कभी न करे।

१३

अभ्रच्छाया, तृणाग्निश्च खले प्रीतिः स्थले जलम्।
वेश्यासक्तिः कुमित्रं च षडेते बुद्बुदोपमाः ॥

—बादल की छाया, फूस की आग, दुष्ट की प्रीति, जमीन पर का पानी, वेश्या में आसक्ति और कुमित्र—ये छह पानी के बुलबुले के समान अर्थात् क्षणिक, होते हैं।

१४

सम्भोजनं संकथनं संप्रीतिश्च परस्परम्।
ज्ञातिभिः सह कार्याणि न विरोधः कदाचन ॥

—महाभारत

—सजातीय जनों के साथ परस्पर भोजन, बातचीत और प्रेम करना चाहिए, उनके साथ कभी विरोध नहीं करना चाहिए।

१५

सुजीर्णमन्नं सुविचक्षणः सुतः
सुशासिता स्त्री नृपतिः सुसेवितः।
सुचिन्त्य चोक्तं सुविचार्य यत्कृतं
सुदीर्घ कालेऽपि न याति विक्रियाम् ॥

—हितोपदेश

—भली भांति पचा हुआ अन्न, सुशिक्षित पुत्र, भली प्रकार नियंत्रण में रक्खी हुई स्त्री, भली भांति सेवित राजा, विचारपूर्ण वचन और अच्छी तरह सोच-विचारकर किया हुआ काम, इनमें बहुत समय बीत जाने

पर भी दोष उत्पन्न नहीं होता।

१६

दरिद्रता धीरतया विराजते,
कुरूपता शीलतया विराजते।
कुभोजनं चोष्णतया विराजते,
कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते॥

—चाणक्य

—दरिद्रता धैर्य से, कुरूपता शील से, बुरा भोजन भी गर्म रहने से और पुराना कपड़ा भी स्वच्छ होने से शोभा पाता है।

१७

जे गण्हन्ति संचिय लच्छीं,
ण हुतेण गौरवट्ठाणम्।
ते ऊण केवि संचिय,
दालिद्दं घेपन्ते जेहिम्॥

—वाक्पति

—जो लोग अपने पराक्रम से लक्ष्मी का उपार्जन करते हैं, वे गौरवस्थान न हों, यह बात नहीं है। वे निस्सन्देह गौरवस्थान हैं। लेकिन वे तो कोई और ही (महापुरुष) हैं, जो समस्त संचित की हुई लक्ष्मी को दान में देकर दारिद्रयव्रत को अंगीकार करते हैं।

१८

महान् व्यक्ति का पहला लक्षण उसकी नम्रता है।

—रस्किन

१९

जिओ और जीने दो।

—हक्सले

२०

पहले हृदय को जीतो, फिर विवेक से अनुरोध करो। जहां से

बुद्धि निराश लौटती है, वहां फिर भी प्रेम की आशा हो सकती है। ऐसी कहानी है कि यात्री के शरीर पर से आंधी कोट न उतरवा सकी, परन्तु गर्मी ने उतरवा दिया था।

—रामतीर्थ

२१

बड़ों की कुछ समता हम उस समय कर पाते हैं जब हम अत्यन्त विनय धारण करते हैं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

२२

जो दीपक को अपने पीछे रखते हैं, वे अपने मार्ग में अपनी ही छाया डालते हैं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

२३

जो उपदेश दूसरों को दो पहले उसके अनुसार स्वयं आचरण करो।

—महात्मा गांधी

२४

ताड़ के नीचे दूध पियोगे तो लोग यही समझेंगे कि ताड़ी पी रहा है।

—अज्ञात

२५

पाप की सिद्धि सदा ऋणवृद्धि,
सुकीरति आपनी आप कही की।
दु:ख को दान जु सूतक न्हानजु,
दासी की सन्तति सन्तत फीकी॥
बेटी को भोजन भूषन रांड़ को,
केशव प्रीति सदा पर ती की।

युद्ध में लाज दया अरि को अरु,
ब्राह्मण जाति सों जीति न नीकी ॥

—केशवदास

२६

दीरघ रोगी दारिदी कटुवच लोलुप लोग।
तुलसी प्रान-समान तउ होंहि निरादर जोग ॥

—तुलसी

२७

पाही खेती, लगन वट[1], रिन-कुब्याज[2] मग-खेत।
बैर बड़े सों आपनो, किये पांच दुःख देत ॥

—तुलसी

२८

नीच निरादर ही सुखद, आदर सुखद बिसाल।
कदली बदली बिटपगति, पेखहु पनस रसाल ॥

—तुलसी

२९

मांगे घटत रहीम पद, कितो करा बढ़ि काम।
तीन पैग बसुधा करी, तऊ बावनै नाम ॥

—रहीम

३०

बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं फल लागै अति दूर ॥

—कबीर

---

[1] ऐसे मार्ग पर चलना, जिसमें चोर-डाकू लगते हों। [2] ऊंचे ब्याज पर ऋण लेना।

३१

अवसर कौड़ी जो चुकै बहुरि दिये का लाख।
दुइज न चन्दा देखिये उदौ कहा भरि पाख॥

—तुलसी

३२

मनिभाजन विष, पारई पूरन अमी निहारि।
का छांड़िय का संग्रहिय कहहु बिबेक विचारि॥

—तुलसी

३३

आपु आप कहं सब भलो, अपने कहं कोइ कोइ।
तुलसी सब कहं जो भलो, सुजन सराहिय सोइ॥

—तुलसी

३४

चरन चोंच लोचन रंगौ, चलै मराली चाल।
छीर-नीर-बिबरन समय, बक उघरत तेहि काल॥

—तुलसी

३५

रोष न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरवार।
सुनत मधुर परिनाम हित, बोलिय बचन विचार॥

—तुलसी

३६

युबा योगी, वैद्य रोगी, शूर पीठी घाव रे।
कीमियागर भीख मांगे, इन्हें मत पतियाव रे॥

३७

प्यार से जोड़ दिये जिसकी तरफ़ हाथ जो आह।
वही खुश हो गया करते ही वह हाथों पर निगाह॥

ग़ौर से हमने है इस बात को देखा वल्लाह।
कि ख़ुशामद से मिली लोगों को है इज्ज़त वजाह॥
जो ख़ुशामद करै ख़ल्क उससे सदा राज़ी है।
सच तो यह है कि ख़ुशामद से ख़ुदा राजी है॥

—नज़ीर

३८

ख़ूब देखा तो ख़ुशामद की बड़ी खेती है।
ग़ैर क्या अपने ही घर बीच यह सुख देती है॥
मां ख़ुशामद की सबब छाती लगा लेती है।
नानी दादी भी ख़ुशामद से दुआ देती है॥
जो ख़ुशामद करै ख़ल्क उससे सदा राज़ी है।
सच तो यह है कि ख़ुशामद से ख़ुदा राजी है॥

—नज़ीर

३९

वो कब सुनने लगे क़ासिद[1] मगर हां यूं सुना देना।
मिलाकर दूसरों की दास्तां में दास्तां मेरी॥

—ज़ौक़

: २१ :

प्रश्न और उत्तर

१

किं संसारे सारं बहुशोऽपि विचिन्त्यमानमिदमेव।
मनुजेषु दृष्टतत्त्वं स्वपरहितायोद्यतं जन्म॥

—प्रश्नोत्तररत्नमाला (अमोघवर्ष)

प्रश्न—संसार में सारवस्तु क्या है ?

---

१. सन्देश-वाहक

उत्तर—बारम्बार विचार करने पर यही निष्कर्ष निकलता है—मनुष्यों में तत्त्वज्ञान और अपने तथा दूसरों के लिए जीवनोत्सर्ग ।

२

नलिनीदलगतजललव तरलं किं यौवनं धनमथायुः ।
के शशधरकरनिकरानुकारिणः सज्जना एव ॥

—अमोघवर्ष

प्रश्न—कमलिनी के पत्ते पर गिरी हुई पानी की बूंद के समान चंचल क्या है ?

उत्तर—यौवन, धन और आयु ।

प्रश्न—चन्द्रमा की किरणों का अनुकरण कौन करता है ?

उत्तर—सज्जन ।

३

कः पूज्यः सद्वृत्तः कमधनमाचक्षते चलितवृत्ताम् ।
केन जितं जगदेतत् सत्यतितिक्षावता पुंसा ॥

—अमोघवर्ष

प्रश्न—पूज्य कौन है ?

उत्तर—सदाचारी मनुष्य ।

प्रश्न— निर्धन किसे कहते हैं ?

उत्तर— चरित्रहीन को ।

प्रश्न—इस संसार को किसने जीता है ?

उत्तर— सत्यवादी और शान्ति-प्रिय मनुष्य ने ।

४

किं शोच्यं कार्पण्यं सति विभवे किं प्रशस्यमौदार्यम् ।
तनुतरवित्तस्य तथा प्रभविष्णोर्यत्सहिष्णुत्वम् ॥

—अमोघवर्ष

प्रश्न – शोचनीय क्या है ?

उत्तर—धन होने पर भी कंजूसी ।

प्रश्न—प्रशंसनीय क्या है ?

उत्तर—ग़रीब की उदारता और शक्तिशाली मनुष्य की सहनशीलता।

५

यक्ष—तिनकों से भी अधिक, असंख्य क्या है ?

युधिष्ठिर—चिन्ता।

यक्ष—अमृत क्या है ?

युधिष्ठिर—दूध।

यक्ष—सनातन धर्म क्या है ?

युधिष्ठिर—ज्ञान।

यक्ष—विष क्या है ?

युधिष्ठिर—याचना।

यक्ष—कौन सदा आनन्द पाता है ?

युधिष्ठिर—ऐसा मनुष्य, जो ऋण से मुक्त हो और प्रवासी न हो; वह चाहे भूखा ही क्यों न रहे पर सदा आनन्द का अनुभव करता है।

यक्ष—दैवविहित सखा कौन है ?

युधिष्ठिर—पत्नी।

—महाभारत

६

सन्त ने पूछा—सर्वोतम जल कौन-सा है ?

एक शिष्य ने उत्तर दिया—गंगा-जल।

सन्त ने फिर पूछा—क्या उससे भी बढ़कर कोई जल है ?

दूसरे शिष्य ने उत्तर दिया—भूमि पर गिरने से पहले का वर्षाजल।

सन्त ने फिर वही प्रश्न किया।

तीसरे शिष्य ने कहा—प्रभात में तरु-पत्र पर चमकनेवाला ओस-जल।

सन्त के पुनः प्रश्न करने पर चौथे शिष्य ने कहा—बिछुड़े हुए पुत्र से मिलने पर माता की आंखों से निकलनेवाला अश्रु-जल !

सन्त को इससे भी सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने पांचवें शिष्य से पूछा।

उसने उत्तर दिया—आजीवन धोखाधड़ी करके संचित धन को देखकर मरणासन्न धनी के नेत्रों से निकलने वाला अनुताप-जल।

अन्त में सन्त ने छठे शिष्य से वही प्रश्न किया।

वह बोला—सारा दिन परिश्रम करके अपने आश्रित प्रियजनों के लिए आहार संग्रह करनेवाले मज़दूर का श्रम-जल (पसीना)।

सन्त ने इस उत्तर से परम सन्तुष्ट होकर उसे साधुवाद दिया।

—अखण्ड आनन्द

: २२ :

अन्योक्ति

१

स्वच्छन्दं दलदरविन्द ते मरन्दं,
विन्दतो विदधतु गुंजितं मिलिन्दाः।
आमोदानथ हरिदंतराणिनेतुं,
नैवान्यो जगति समीरणात्प्रवीणः॥

—भामिनी-विलास

—हे प्रफुल्लित कमल! तेरे स्वच्छन्द मकरन्द को ग्रहण करके भौंरे गूंज रहे हैं, पर पवन के सिवा तेरी सुगन्ध को सब दिशाओं में ले जाने में दूसरा और कोई समर्थ नहीं।

२

नितरां नीचोऽस्मीति त्वं खेदं कूप मा कदापि कृथाः
अत्यन्त सरसहृदयो यतः परेषां गुणगृहीतासि॥

—भामिनी-विलास

—हे कूप ! मैं नीचा हूं ऐसा समझकर मन में खेद न कर, क्योंकि तू अत्यन्त सरस हृदय और दूसरों के गुण (सद्गुण और रस्सी) को ग्रहण करनेवाला है ।

३

कल्लोलसंचलदगाधजलैरलोलैः,
कल्लोलिनी परिवृढैः किमपेय तोयैः ।
जीयात्स जर्जरतनुर्गिरिनिर्झरोयं,
यद्बिन्दुनापि तृषिता वितृषी भवन्ति ॥

—उस अगाध जलराशिपूर्ण नदियों के समूह से निर्मित समुद्र से क्या लाभ, जिसका जल पीने योग्य नहीं हैं । हमारे लिए तो यह बेचारा जर्जर शरीर पहाड़ी झरना ही अच्छा है, जिसकी बूंद-बूंद से तृषितों की प्यास तो मिट जाती है ।"

४

किं तेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा,
यत्राश्रिता हि तरवस्तरवस्त एव ।
मन्यामहे मलयमेव यदाश्रयेण,
शाखोट निम्ब कटुजा अपि चन्दनानि ॥

—सोने के सुमेरु पर्वत या चांदी के कैलास पर्वत की क्या तारीफ की जाय, जहां के वृक्ष ज्यों-के-त्यों ही बने रहते हैं । हम तो उस मलय पर्वत की प्रशंसा करेंगे, जहां कड़वे, तीखे नीम आदि कुवृक्ष भी सुगन्धित चन्दन बन जाते हैं ।

५

जनकः सानुविशेषो जातिः काष्ठं भुजंगमैः सङ्गः ।
स्वगुणैरेव पटीरज यातोऽसि तथापि महिमानम् ॥

—भामिनी-विलास

—हे चन्दन ! तेरा पिता पर्वत का शिखर है, तेरी जाति काठ की है, संगति सांपों की है, तथापि तू अपने गुणों से महिमा को प्राप्त होता है ।

६

युक्तं सभायां खलु मर्कटानां,
शाखास्तरूणां मृदुलासनानि ।
सुभाषितं चीत्कृतिरातिथेयी,
दन्तैर्नखाग्रैश्च विपाटनानि ।।

—भामिनी-विलास

—बन्दरों की सभा में वृक्षों की शाखाओं के ही 'कोमल' आसन, चीत्कार ही के 'सुभाषित' और सुतीक्ष्ण दांतों-नखों से काटने ही के 'अतिथि-सत्कार' का होना उचित है।

७

युक्तोऽसि भुवनाभारे मा वक्रं वितनु कन्धरां शेष ।
त्वय्येकस्मिन् दुःखिनि सुखितानि भवन्ति भवन्ति ।।

—हे शेष ! तू संसार का भार उठाने पर नियुक्त है। (भार उतारने के लिए) तू गर्दन टेढ़ी मत कर। तेरे अकेले दुःखी होने से लोगों को सुख मिलता है।

८

मुरारातिर्लक्ष्मीं त्रिपुरविजयी शीतकिरणं ।
करीन्द्रं पौलोमीपतिरपि च लेभे जलनिधेः ।।
त्वया किंवा लब्धं कथय मथितो मन्दरगिरे ।
शरण्यः शैलानां यदयमदयं रत्ननिलयः ।।

—हे मन्दराचल ! रत्नों की खान और पर्वतों को शरण देने वाले इस समुद्र को निर्दयतापूर्वक मथने में कहो तुम्हें क्या मिला ! विष्णु को तो लक्ष्मी मिली, शिवजी को चन्द्रमा और इन्द्र को ऐरावत हाथी मिला, पर तुम्हारे हाथ क्या लगा !

९

तपने-उदये हबे महिमार क्षय ।
तबु प्रभातेर चांद शान्तमुखे कय ।।

अपेक्षा करिया अछि अस्तसिन्धु तीरे ।
प्रणाम करिया जाब उदित-रबिरे ।।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

—सूर्य के उगने पर उसकी महिमा समाप्त हो जायगी, यह जानता हुआ भी प्रभात का चन्द्रमा शान्तमुख होकर कहता है—अस्तसिन्धु के किनारे खड़ा प्रतीक्षा कर रहा हूं कि सूर्य के उदित होने पर उन्हें प्रणाम तो करता जाऊं ।

१०

महुआ नित उठि दाख सों करत मसलहत आम ।
हम-तुम सूखे एक-से हूजत हैं रसराम ।।
हूजत हैं रसराय बिलग जानि याको मानो ।
मधुर मिष्ठ हम अधिक कछुक जिम से जनि जानो ।।
कह गिरिधर कविराय कहत साहब से रहुवा ।
तुम नीचे फल बेलि वृक्ष हम ऊंचे महुवा ।।

—गिरिधर कविराय

११

तरु तुंग निहारि थक्यो प्रथमै,
पुनि लायो सुरंग फलै मन में ।
ऋतुराज के औसर में शुक मूढ़,
रह्यो सोइ खान की घातन में ।।
दिन पूरे हुए फल पाके जबै,
खुलि पोल गई सगरी छन में ।
कढ़ि आयो भुवा पछितायो सुवा,
मुवा सेइ के सेमर कानन में ।।

—राय देवीप्रसाद 'पूर्ण'

१२

करने चले तंग पतंग, जलाकर
मिट्टी में मिट्टी मिला चुका हूं ।
तमतोम का काम तमाम किया,
दुनिया को प्रकाश में ला चुका हूं ।।
नहीं चाह सनेही सनेह की ओर
सनेह में जी मैं जला चुका हूं ।
बुझने का मुझे कुछ दुःख नहीं,
पथ सैकड़ों को दिखा चुका हूं ।।
लघु मिट्टी का पात्र था, स्नेह भरा
जितना उसमें भर जाने दिया ।
धर बत्ती हिये पर कोई गया,
चुपचाप उसे धर जाने दिया ।।
पर-हेतु रहा जलता मैं निशा भर—
मृत्यु का भी डर जाने दिया ।
मुसकाता रहा जलते-जलते,
हँसते-हँसते सर जाने दिया ।।

—सनेही

: २३ :

व्यंग-विनोद

१

एका भार्या प्रकृतिमुखरा चंचला च द्वितीया,
पुत्रस्त्वेको भुवनविजयी मन्मथो दुर्निवारः ।
शेषः शैया शयनमुदधौ, वाहनं पन्नगारिः,
स्मारं स्मारं स्वगृहचरितं दारूभूतो मुरारिः ।।

—एक पत्नी है सरस्वती, जो स्वभाव से ही वाचाल है, दूसरी लक्ष्मी है जो चंचला है, कहीं भी एक जगह टिककर नहीं रहती। तीनों भुवनों का विजेता कामदेव एक पुत्र है, जो नियंत्रण में नहीं रहता। शेषनाग की शैया है, समुद्र में सोना है और सर्पों के शत्रु गरुड़ की सवारी है। अपने घर की ऐसी अवस्था याद कर-करके बेचारे विष्णु काठ के हो गये।

२

अत्तुं वांछति वाहनं गणपतेराखुं क्षुधार्तः फणी,
तं च क्रौंचपतेः शिखी च गिरिजासिंहोऽपि नागाननम् ॥
गौरी जह्नुसुतामसूयति कलानाथं कपालानलो,
निर्विण्णः स पपौ कुटुम्बकलहादीशोऽपि हालाहलम् ॥

—गणेशजी के वाहन चूहे को उन्हींके (शिवजी के) गले का हार सर्प खाना चाहता है, उस सांप को कार्तिकेयजी का वाहन मोर खा जाना चाहता है। पार्वतीजी का वाहन शेर स्वयं गणेशजी को, हाथी का बच्चा समझकर, उदरस्थ करना चाहता है। पार्वतीजी गंगा-जी को देखकर डाह के मारे जली जा रही हैं, कपाल पर विराजने-वाला चंद्रमा और वहीं तीसरे नेत्र में स्थित अग्नि दोनों एक दूसरे को खतम करने पर तुले हैं। अपने परिवार में हो रहे इस संघर्ष से तंग आकर बेचारे शिवजी को हलाहल विष पीना पड़ा।

३

उदरद्वयभरणभयादर्धांगाहितदारः।
यदि नैवं तस्य सुतः कथमद्यापि कुमारः॥

—दो पेटों को (अपने और पार्वती जी के पेटों को) भरने के भय से महादेव एक पेटवाले—अर्ध-नारीश्वर बन गये। यदि वह ऐसा नहीं करते तो उनका पुत्र कार्तिकेय अभी तक कुंवारा ही रहता।

४

स्वयं पंचमुखः पुत्रौ गजाननषडाननौ।
दिगंबरः कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद्गृहे॥

—स्वयं पांच मुखवाले (महादेवजी) हैं, हाथी के मुखवाले गणेश-जी और छह मुखवाले कार्तिकेयजी पुत्र हैं, ऐसे दिगम्बर महादेवजी, अगर उनके घर में अन्नपूर्णा न हों तो, जीते भला कैसे रह सकते हैं ?

५

वाचयति नान्यलिखितं,
लिखितमनेनापि वाचयति नान्यः ।
अयमपरोऽस्य विशेषः
स्वयमपि लिखितं स्वयं न वाचयति ।।

—(ऐसे बहुत-से लोग होते हैं) जो दूसरे का लिखा नहीं पढ़ सकते और इनका लिखा दूसरे भी नहीं पढ़ पाते । पर इनकी विशेषता तो यह है कि ये अपना लिखा स्वयं नहीं पढ़ सकते ।

६

शिक्षितापि सखिभिर्ननु सीता रामचन्द्र चरणौ न ननाम ।
किं भविष्यतिमुनीश वधुवम्दालरत्नमिह तद्रजसेति ।।

—सखियों के समझाने-बुझाने पर भी सीता ने राम के चरणों में सिर टेककर नमस्कार नहीं किया । उन्हें इस बात का डर था कि यदि रामचन्द्र के चरणों की रज के स्पर्श से उनके (सीता के) ललाट के आभूषणों में जो रत्न लगे हैं, उनकी गति शिलारूप मुनि-पत्नी अहल्या जैसी न हो जाय ।

७

परान्नं प्राप्य दुर्बुद्धे मा प्राणेषु दयां कुरु ।
दुर्लभानि परान्नानि प्राणा जन्मनि जन्मनि ।।

—हे मूर्ख ! पराये अन्न को प्राप्त करके, अपने शरीर की चिंता छोड़ दे । शरीर तो बार-बार मिलेगा । पराया भोजन तो दुर्लभ होता है ।

८

साँई घोड़न के अछत गदहन पायो राज।
कौआ लीजै हाथ में दूरि कीजिये बाज ॥
दूरि कीजिये बाज राज पुनि ऐसोइ आयो।
सिंह कीजिये कैद स्यार गजराज चढ़ायो ॥
कह गिरधर कविराय जहां यह बूझि बड़ाई।
तहां न कीजै भोर सांझ उठि चलिये सांई ॥

—गिरधर कविराय

९

हे पांडे, यह बात को को समुझै या ठांव।
इतै न कोई है सुधी यह ग्वारन को गांव ॥
यह ग्वारन का गांव नांव नहिं सूधे बोलैं।
बसैं पसुन के संग अंग ऐड़ें करि डोलैं ॥
बरनै दीनदयाल छांछ भरि लीजै भांड़े।
कहा कहो इतिहास सुनै को इत हे पांड़े ॥

— दीनदयाल गिरि

१०

भोजन में भट्ट बली, लट्ठ बली हुज्जत में,
मूस बली प्लेग में औ घूस कचेहरी में।
कानन में केहरी दुपहरी में भानु बली,
बली अर्दली है बड़े साहब की डेहरी में ॥

महाकवि चच्चा

११

साधुता, सद्धर्म चर्चा, ब्रह्मनिष्ठा कुछ नहीं।
रख लिया बस नाम बढ़िया और स्वामी बन गये ॥

—अज्ञात

१२

हमारी इतनी ही तक़सीर है ऐ ज़ाहिद[१] !
जो-कुछ है दिल में तेरे हम वोह फ़ाश[२] करते हैं ।।

—दर्द

१३

तेरी लीडरी है बहुत ख़ूब धन्धा ।
ग़रज़ यों ही खाता कमाता चला जा ।।

—अज्ञात

१४

'सौदा' ख़ुदा के वास्ते कर क़िस्सा मुख़्तसिर ।
अपनी तो नींद उड़ गई तेरे फ़साने से ।

—सौदा

१५

तुम फ़ातिहा भी पढ़ चुके हम दफ्न भी हुए ।
बस ख़ाक में मिला चुके चलिये सिधारिये ।।

—आतिश

१६

फ़सले बहार आई पियो सूफ़ियो शराब ।
बस हो चुकी नमाज़ मुसल्ला उठाइये ।।

—आतिश

१७

वे करते हैं बातें अजब चिकनी-चिकनी ।
यह मतलब कि चौपट हो कोई फ़िसलकर ।।

—अमीर मीनाई

---

[१] संयमी उपासक । [२] प्रकट ।

१८

जिसमें लाखों बरस की हूरें[1] हों।
ऐसी जन्नत[2] का क्या करे कोई !

—दाग़

१९

चाकरी से भी सवाया आनरेरी बिल बने।
यों छिपा खाना-कमाना कोई हमसे सीख जाय।।

—जौक

२०

मीर साहब ज़माना नाज़ुक है।
दोनों हाथ से थामिये दस्तार[3]।।

—मीर

२१

नौकरों पर जो गुज़रती है मुझे मालूम है।
बस करम[4] कीजै, मुझे बेकार रहने दीजिये।।

—अकबर

२२

कुछ मज़ा गेहूं का कुछ हौवा के कहने का ख़याल।
आप ही कहिये कि इस मौक़े पर आदम क्या करे।।

—अकबर

२३

धुन देस की थी जिसमें गाता था इक दिहाती।
बिसकुट से है मुलायम पूरी हो या चपाती।।

—अकबर

[1]परियाँ; [2]स्वर्ग; [3]पगड़ी; [4]दया।

२४

दिल में अब नूरे ख़ुदा के दिन गये।
हड्डियों में फ़ासफ़ोरस देखिये।।

—अकबर

२५

इनको क्या काम है मुरव्वत से,
अपने रुख से ये मुंह न मोड़ेंगे।
जान शायद फ़रिश्ते छोड़ भी दें,
डॉक्टर फ़ीस को न छोड़ेंगे।।

—अकबर

२६

जैसा मौसिम हो मुताबिक उसके मैं दीवाना हूं।
मार्च में बुलबुल हूं जौलाई में परवाना हूं।।

—अकबर

२७

पेट मसरूफ़ है कलर्की में।
दिल है ईरान और टर्की में।।

—अकबर

२८

खींचो न कमानों को न तलवार निकालो।
जब तोप मुक़ाबिल हो तो अख़बार निकालो।।

—अकबर

२९

कमर बांधी भी यारों ने जो राहे हुब्बेक़ौमी[1] में।
वह बोले—तू नहीं चलता, वह बोले—तू नहीं चलता।।

—अकबर

[1] राष्ट्र-प्रेम।

३०

कोठी में जमा है न डिपाज़िट[1] है बैंक्स में ।।
क़ल्लाश[2] कर दिया मुझे दो-चार थैंक्स[3] में ।।

—अकबर

३१

होटल से भला परहेज़ तुम्हें,
अब पंडितजी महाराज कहां ।
सच बात कही जिसने य' कहा,
जब लाग लगी तब लाज कहां ।।

—अकबर

३२

मुरीद उनके तो शहरों में उड़े फिरते हैं मोटर पर ।
नज़र आते हैं लेकिन शेखजी अबतक मियाने में ।।

—अकबर

३३

मेम्बर अलीमुराद हैं या सुखनिधान हैं ।
लेकिन मुआइने को यही नाबदान हैं ।।

—अकबर

३४

आपकी अंजुमन की है क्या बात ।
आह छिपती है वाह छपती है ।।

—अकबर

३५

किसीकी तो ज़ाहिद[4] को होती मोहब्बत ।
बुतों[5] की न होती, खुदा की तो होती ।।

—अकबर

[1]जमा; [2]निर्धन; [3]धन्यवाद; [4]संयमी उपासक; [5]मूर्तियों, सुन्दरियों ।

३६

मालगाड़ी पै भरोसा है जिन्हें ऐ 'अकबर' ।
उनको क्या ग़म है गुनाहों की गिरांबारी[1] का ?

—अकबर

३७

खुदा की राह में बेशर्त करते थे सफ़र पहले ।
मगर अब पूछते हैं, 'रेलवे इसमें कहांतक है ?'

—अकबर

३८

मेरी नसीहतों को सुनकर वो शोख़ बोला ।
'नेटिव[2] की क्या सनद[3] है, साहब कहे तो मानूं ।।'

—अकबर

३९

दिल लिया है हम से जिसने दिल्लगी के वास्ते ।
क्या ताज्जुब है, जो तफ़रीहन्[4] हमारी जान ले ।।

—अकबर

४०

सिधारें शेख़[5] काबे को, हम इंगलिस्तान देखेंगे ।
वह देखें घर खुदा का हम खुदा की शान देखेंगे ।।

—अकबर

४१

ख़िलाफ़ें-शरअ[6] कभी शेख थूकता भी नहीं ।
मगर अंधेरे उजाले में चूकता भी नहीं ।।

—अकबर

---

[1]भारी बोझ ; [2]देसी आदमी ; [3]प्रमाण ; [4]मनोरंजनार्थ ; [5]इस्लाम का आचार्य ; [6]मुस्लिम धर्मशास्त्र के प्रतिकूल ।

४२

मुझीको सब यह कहते हैं कि रख नीची नज़र अपनी।
कोई उनको नहीं कहता, न निकालो यूं अयां[1] होकर॥

—अकबर

४३

उनसे बीवी ने फ़क़त स्कूल ही की बात की।
यह न बतलाया कहां रक्खी है रोटी रात की॥

—अकबर

४४

थी शबे-तारीक[2] चोर आये जो कुछ था ले गये।
कर ही क्या सकता था बन्दा खांस लेने के सिवा॥

—अकबर

४५

तुम बीवियों को मेम बनाते हो आजकल।
क्या ग़म जो हमने मेम को बीवी बना लिया ?

—अकबर

४६

बाद मरने के मेरी क़ब्र पै आलू बोना।
ता[3] वह समझें कि ज़रा चाट के शौक़ीन भी थे॥

—अकबर

४७

डार्विन साहब हक़ीक़त[4] से निहायत दूर थे।
मैं न मानूंगा कि मूरिस[5] आपके लंगूर थे॥

—अकबर

[1]प्रकट; [2]अंधेरी रात; [3]ताकि, जिससे; [4]असलियत; [5]पूर्वज।

४८

मेरा टट्टू है ज्यादा मशरकी[१] इन शेखसाहब से।
कि ये मोटर पै चढ़ते हैं वह मोटर से बिदकता है।।

—अकबर

४६

उसकी बेटी[२] ने उठा रखी है दुनिया सर पर।
खैरियत गुजरी कि अंगूर के बेटा न हुआ।।

—अकबर

५०

रक़ीबों[3] ने रपट[४] लिखवाई है जा-जा के थाने में।
कि अकबर नाम लेता है खुदा का इस जमाने में।।

—अकबर

५१

मज़हब ने पुकारा अय अकबर, अल्लाह नहीं तो कुछ भी नहीं।
यारों ने कहा यह क़ौल[५] ग़लत, तनख्वाह नहीं तो कुछ भी नहीं।।

—अकबर

५२

बेपास[६] को तो सास की भी अब नहीं है आस।
मौकूफ़ शादियां भी हैं अब इम्तहान पर।।

— अकबर

५३

जिधर साहब उधर दौलत, जिधर दौलत उधर चन्दा।
जिधर चन्दा उधर ऑनर,[७] जिधर ऑनर उधर बन्दा।।

—अकबर

[१]पूरब का [२]अंगूर की बेटी, शराब; [3]प्रतिस्पर्धियों; [४]शिकायत
[५]सिद्धान्त-कथन; [६]नापास; [७]इज्जत।

५४

है गुदाम[1] आपका, मस्जिद की जरूरत क्या है ?
पेट तो है, दिल—आगाह[2] नहीं है, न सही ।।

—अकबर

५५

बूट डासन[3] ने बनाया, मैंने एक मज़मूं[4] लिखा ।
मुल्क में मज़मूं न फैला और जूता चल गया ।।

—अकबर

५६

ख्वाह साहब को तुम सलाम करो,
ख्वाह मन्दिर में राम राम करो ।।
भाईजी का फ़क्त ये मतलब है,
जिसमें रुपया मिले वो काम करो ।।

—अकबर

५७

स्माल[5] नहीं ग्रेट[6] होना अच्छा ।
दिल नहीं पेट होना अच्छा ।।

—अकबर

५८

पंडित हो कि मौलवी हो, दोनों बेकार ।
इन्सान को ग्रेजुएट[7] होना अच्छा ।।

—अकबर

---

[1] गोदाम; [2] ज्ञानी हृदय; [3] डॉसन—एक नाम है; [4] लेख; [5] छोटा; [6] बड़ा; [7] कालिज का स्नातक ।

५६

नहीं कुछ इसकी पुरसिश[1] उल्फ़ते-अल्लाह[2] कितनी है।
यही सब पूछते हैं आपकी तनख्वाह कितनी है।।

—अकबर

: २४ :

लोकोक्ति

संस्कृत

१. अति सर्वत्र वर्जयेत्
२. अधिकस्याधिकं फलम्
३. अनभ्यासे विषं शास्त्रं
४. अर्थी दोषान्न पश्यति
५. अभोगस्य हतं धनम्
६. अल्पविद्यो महागर्वी
७. अतिपरिचयादवज्ञा सन्तत गमनादनादरो भवति।
८. आपदर्थे धनं रक्षेत्
९. आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्
१०. आपत्तिकाले मर्यादानास्ति
११. अन्धस्येवान्धलग्नस्य विनिपातः पदे-पदे।
१२. उत्सवप्रियाः खलु मनुष्याः
१३. उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्
१४. एकस्य दुःखस्य न यावदन्तं
तावद्द्वितीयं समुपस्थितं मे।
१५. कवयः किं न पश्यन्ति
१६. कण्ठे सुधा वसति वै खलु सज्जनानाम्

---

[1] पूछताछ [2] ईश-प्रेम।

१७. कालस्य कुटिलागतिः

१८. किञ्चित्कालोपभोग्यानि
यौवनानि धनानि च ।

१९. किमज्ञेयं हि धीमताम्

२०. कुरूपी बहुचेष्टिकः

२१. कृशे कस्यास्ति सौहृदम्

२२. चोराणामनृतं बलम्

२३. चोराणां चन्द्रमा रिपुः

२४. छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम्

२५. चिन्ता समां नास्ति शरीर शोषणम

२६. दारिद्र्यदोषो गुणराशिनाशी

२७. दूरतो भूधरा रम्याः

२८. देवो दुर्बलघातकः

२९. दैवी विचित्रागतिः

३०. निरंकुशाः कवयः

३१. निस्सारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान्

३२. पूज्यं वाक्यं समृद्धस्य

३३. पुत्रः शत्रुरपंडितः

३४. प्रत्यक्षे किम्प्रमाणम्

३५. प्रायः समासन्न विपत्तिकाले,
धियोऽपि पुंसां मलिनी भवन्ति

३६. बालानां रोदनं बलम्

३७. भिन्न रुचिर्हि लोकः

३८. मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखं ।

३९. मानो हि महतां धनम्

४०. मुखमस्तीति वक्तव्यं शतहस्ता हरीतकी ।

४१. मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्नाः

४२. मौनं सम्मति लक्षणम्
४३. मौनं सर्वार्थ साधनम्
४४. यदेव रोचते यस्मै भवेत्तत्तस्य सुन्दरम्
४५. यत्सारभूतं तदुपासनीयम्
४६. यथा नाम तथा गुणाः
४७. यद्यपि शुद्धं लोकविरुद्धं,
नोकरणीयं नाचरणीयं ।
४८. यथा बीजं तथाङ्कुरः
४९. लाभाल्लोभः प्रवर्धते
५०. विद्यातपोभ्यां क्लेशहानिः
५१. विद्या धनं सर्वधनप्रधानम्
५२. विनाशकाले विपरीत बुद्धिः
५३. विषस्य विषमौषधम्
५४. वसुधैव कुटुम्बकम्
५५. वीरभोग्या वसुन्धरा
५६. शुभस्य शीघ्रम्
५७. शत्रोरपि गुणावाच्याः,
दोषावाच्याः गुरोरपि
५८. श्रेयांसि बहु बिघ्नानि
५९. संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति
६०. सन्तोषं परमं सुखम्
६१. समान शील व्यसनेषु सख्यम्

हिन्दी

१. अपना सो अपना, पराया सो सपना ।
२. अधजल गगरी छलकत जाय ।
३. अन्त भला, सो भला ।

४. उठी पैंठ आठवें दिन लगती है।

५. ऊंट के गले में बिल्ली

६. ऊंच अटारी, मधुर बतास।
कहे घाघ घर ही कैलास।।

७. एक की दवा दो

८. कुछ कही कबीरदास बहुत बढ़ाई भगतन।

९. कौवा से कौवलवे[1] चतुर !

१०. क्वार तथा चैत के भरोसे वैद्य कर्ज़ लेते हैं।

११. खिचड़ी खाते पहुंचा टूटा

१२. गरज़ सरो, बैद मरो

१३. गहकी रीझै गदहा लेय।

१४. घर-घर देखा, ये ही लेखा।

१५. घर में नहीं चने की चूर।
बेटा मांगे मोतीचूर।।

१६. घर नहीं दाने, अम्मा चलीं भुनाने।

१७. घर ब्याह, बहू कंडों को डोले।

१८. घर के भेद तबहिं हम पावा।
चउक पुरन के ढांकन आवा।।

१९. जमात की करामात

२०. जाके पांव न फटे बिवाई।
सो क्या जाने पीर पराई।।

२१. जे पांडे के पतरा में।
से पंडाइन के अंचरा में।।

२२. जो गदहा हर जोतिये, तो क्यों लीजै बैल।

---

[1]कौये का बच्चा।

२३. जो न मिलै त्रिलोक से।
सो मिलै संतोष से ।।

२४. ठठेरे-ठठेरे बदलाई नहीं होती

२५. तन में नहीं लत्ता, पान खाय अलबत्ता।

२६. थोथा चना, बाजे घना।

२७. दाता दे, भंडारी का पेट फटे।

२८. देशी गधा, पूरबी रेंक।

२९. धोबी पर धोबी बसें,
तब कपड़ा पर साबुन हँसे।

३०. नवै सो गरुआ होय।

३१. निकली होंठा, चढ़ी कोठा।

३२. नीमर सिकारी तो गौरैया मारै मटकी।

३३. पांडेजी पछतायेंगे।
वही चने की खायेंगे ।।

३४. पर कपड़ा कै कौन सिंगार।
बिना द्रव्य के का व्यापार ।।

३५. बासी बचे न कुत्ता खाय।

३६. माटी के देवता, केराव का अच्छत।

३७. मारा चोर उपवासा पहुना।
फिर न आवै हमारे अंगना ।।

३८. मियांजी की दाढ़ी चूमने ही में गई।

३९. मुर्गी को तकली का घाव ही बहुत है।

४०. यह बात वह बात, टका धर मेरे हाथ।

४१. राग, रसोई, पागड़ी,
कबहुं-कबहुं बनि जाय।

४२. रोते गये मरे की खबर लाये।

४३. वही साठ वही तीन बीसी।

४४. सात-पांच की लाकड़ी,
बोझ एक को होय।

४५. सिखाये पूत से दरबार नहीं होता।

४६. सूरज से रेत ज्यादा तपती है।

४७. हर्रे लगे न फिटकरी,
रंग चोखा होय।

४८. हाथ न मुट्ठी, खुलखुलाय उट्ठी।

४९. हाथ की सांकरि, मुंह की पियारी।
गरे लागि रोवै मौसी हमारी।

५०. हिम्मते मर्दां मददे खुदा

समाज पंजाबी बाग
पुस्तकालय
....
नई दिल्ली-२६

'मंडल' द्वारा प्रकाशित कुछ पुस्तकें

आत्मकथा	(गांधीजी)	४.००
प्रार्थना-प्रवचन : २ भाग	,,	५.५०
गीता-माता	,,	४.००
पन्द्रह अगस्त के बाद		१.५०,२.००
धर्मनीति	,,	१.५०,२.००
द० अफ्रीका का सत्याग्रह		३.५०
मेरे समकालीन	,,	५.००
आत्म-संयम	,,	३.००
गीता-बोध	,,	.५०
अनासक्तियोग	,,	.७५
ग्राम-सेवा	,,	.३७
मंगल-प्रभात	,,	.३७
सर्वोदय	,,	.३७
नीति-धर्म	,,	.३७
आश्रमवासियों से	,,	.५०
हमारी मांग	,,	१.००
सत्यवीर की कथा	,,	.२५
आत्मकथा (संक्षिप्त)	,,	१.००
हिन्द-स्वराज्य	,,	.७५
अनीति की राह पर	,,	१.००
बापू की सीख	,,	.५७
गांधी-शिक्षा : तीन भाग	,,	.७४
आज का विचार : दो भाग	,,	.७४
ब्रह्मचर्य : दो भाग	,,	१.७५
गांधीजी ने कहा था : ६ भाग		२.७०
शान्ति-यात्रा	(विनोबा)	१.५०
विनोबा के विचार : २ भाग		३.००
जीवन और शिक्षण	,,	२.००
स्थितप्रज्ञ-दर्शन	,,	१.००
ईशावास्यवृत्ति	,,	.७५
ईशाबास्योपनिषद्	,,	.१२
सर्वोदय-विचार	,,	१.१२
स्वराज्य-शास्त्र	,,	.५०
गांधीजी को श्रद्धांजलि	,,	.३७
भूदान-यज्ञ	(विनोबा)	.२५
राजघाट की संनिधि में	,,	.६२
विचारपोथी	,,	१.००
सर्वोदय का घोषणा-पत्र	,,	.२५
सर्वोदय-संदेश	,,	१.५०
मेरी कहानी	(नेहरू)	१०.००
,, (संक्षिप्त)	,,	२.५०
हिन्दुस्तान की समस्याएं	,,	२.५०
राष्ट्रपिता	,,	२.००
राजनीति से दूर	,,	२.००
विश्व-इतिहास की झलक (संक्षिप्त)		६.००
हिन्दुस्तान की कहानी (संपूर्ण)		१०.००
हिन्दुस्तान की कहानी (संक्षिप्त)		२.५०
नया भारत	,,	.३०
आजादी के दस साल	,,	.३०
गांधीजी की देन	(राजेन्द्रप्रसाद)	१.५०
गांधी-मार्ग	,,	.१२
महाभारत-कथा	(राजाजी)	५.००
दशरथ-नन्दन श्रीराम		५.००
कुब्जा-सुन्दरी	,,	२.२५
शिशु-पालन	,,	.५०
मैं भूल नहीं सकता	(काटजू)	२.५०
कारावास-कहानी	,,	७.५०
गांधी की कहानी		१.५०
भारत-विभाजन की कहानी		१.५०
इंगलैंड में गांधीजी		१.२५
बा, बापू और भाई		.५०
गांधी-विचार-दोहन		१.५०
बुद्ध-वाणी	(वियोग हरि)	१.००
सन्त-सुधासार	,,	६.००
श्रद्धा-कण	,,	०.७५
श्रेयार्थी जमनालालजी	,,	२.००
तामिल-वेद		१.५०
बापू के आश्रम में	(हरिभाऊ उपाध्याय)	१.२५

मानवता के झरने	१.५०	ग्राम-सुधार	१.२५
बापू (घ० दा० बिड़ला)	२.००	पशुओं का इलाज	.७५
रूप और स्वरूप "	'७५	चारा-दाना	.२५
डायरी के पन्ने "	१.००	रामतीर्थ-संदेश—३ भाग	१.१२
ध्रुवोपाख्यान "	.३०	रोटी का सवाल	३.००
स्त्री और पुरुष (टाल्स्टाय)	१.००	नवयुवकों से दो बातें	.५०
मेरी मुक्ति की कहानी "	१.५०	पुरुषार्थ	६.००
प्रेम में भगवान "	२.५०	काश्मीर पर हमला	२.००
जीवन-साधना "	१.२५	शिष्टाचार	०.५०
कलवार की करतूत "	.३५	तट के बंधन	२.५०
हमारे जमाने की गुलामी"	१.००	भारतीय संस्कृति	३.५०
बुराई कैसे मिटे ? "	१.००	आधुनिक भारत	५.००
बालकों का विवेक "	.५०	फलों की खेती	३.००
हम करें क्या ? "	४.००	मैं तन्दुरुस्त हूं या बीमार ?	०.५०
धर्म और सदाचार "	१.२५	नवजागरण का इतिहास	३.००
अंधेरे में उजाला "	१.५०	गांधीजी की छत्र-छाया में	१.५०
ईसा की सिखावन "	१.००	भागवत-कथा	३.५०
कल्पवृक्ष	२.५०	जय अमरनाथ	१.५०
साहित्य और जीवन	२.००	आज का इंग्लिस्तान	२.००
कब्ज (म० प्र० पोद्दार)	१.००	उत्तराखंड के पथ पर	२.५०
हिमालय की गोद में "	२.००	अतलांतिक के उस पार	२.५०
कहावतों की कहानियां"	२.२५	हमारी लोक-कथाएं	१.५०
राजनीति-प्रवेशिका	१.००	संस्कृत-साहित्य-सौरभ	
जीवन-संदेश	१.२५	(३६ पुस्तकें) प्रत्येक	.४०
अशोक के फूल	३.००	समाज-विकास-माला	
जीवन-प्रभात	५.००	(१५१ पुस्तकें) प्रत्येक	.३७
कांग्रेस का इतिहास २ भाग	२०.००	कृषि-ज्ञान-कोष	४.००
सप्तदशी	२.००	प्रकाश की बातें	१.५०
रीढ़ की हड्डी	१.५०	ध्वनि की लहरें	१.५०
अमिट रेखाएं	३.५०	गरमी की कहानी	१.५०
एक आदर्श महिला	१.००	धरती और आकाश	१.५०
स्वतन्त्रता की ओर	४.००	आकाश-दर्शन	२.००
राष्ट्रीय गीत	०.३०	समुद्र के जीवजंतु	१.५०
हमारे गांव की कहानी	२.००	पक्षियों की दुनिया	१.५०
खादी द्वारा ग्राम-विकास	.७५	जानवरों का जगत	२.००
साग-भाजी की खेती	३.५०	अक्षर गीत	२.००

●